BMZ

Caritas INDIA
The Joy of Service...

caritas Germany

द्वारा संचालित

सबल परियोजना

"कोरकू जनजाति के हित के लिए एकिकृत खाद्य एवं पोषण सुरक्षा"

देवधान फसल बुआई पद्धतीयॉं

Packages of Practices for Traditional Millet Cultivation

कुटकी (व्हारी/प्रोसामिलेट)

कुटकी यह फसल, भरत के पहाडी क्षेत्र की महत्वपूर्ण द्वितीय स्तर की घास वर्गीय फसल है, जिसे व्हारी नाम से भि जाना जाता है एवं इंग्लिश मे इस फसल को प्रोसोमिलेट कहते है। यह फसल सुखा प्रवण क्षेत्र के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण है एवं सुखा प्रवण क्षेत्र के लिये अनुकुलीत फसल है कुटकी यह फसल 60 से 90 दिन के अंतराल मे वर्षा आधारीत खेती के लिये सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होती है, इस फसल की बुआई खरीफ तथा रबी ऋतु के बिच में होती है, परंतू जिस, क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाये होती है, वहॉ गर्मी के मौसम मे इस फसल की बुआई किसान कर सकते है।

आंतरिक घटक : (Internal Component)

कुटकी फसल में 12.5% प्रतिशत प्रोटीन्स के साथ लॅसिन एवं अमीनो आम्ल ज्यादा मात्रा मे पाया जाता है जो की लॅसिस का मात्रा प्रोटीन के कुल प्रमाण से 4 से 6% है. इस के अलावा 1.1% सिन्ध, 68.9 % कर्ब एवं 3.4% राख की मात्रा कुटकी फसल में पाई जाती है। कुटकी के आटे का उपयोग विभिन्न खादय पदार्थ बनाने में किया जाता है, जैसे की चापाती, खिर तथा चावल बनाने की विधी एवं मुर्गीपालन के लिये खादय एवं जानवरो के खादय के रूपमे किया जाता है, यह खादय इसके अनाज निकलने के बाद बचा हुआ भुसा जानवरो के लिये एक उच्च गुणवत्ता वाला आहार होता है।

उदय स्थान एवं इतिहास :

इस फसल का उदय स्थान भारत है और भारत से ही अन्य देशो मे इसका प्रचार एवं प्रसार हुआ हैं। ऐसे कहॉ जाता है की फसल पॅनिकम सिलोपोडीयम प्रकार के घास से निर्माण हुआ है और इस फसल के विभीन्न प्रकार मुख्यता ब्रम्हदेश, भारत और मलेशिया जैसे दिशो से दिखाई देते है। महाराष्ट्र तथा मध्यप्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र मे मुख्यत ठाणे, कुलाबा, रत्नागिरी, नासिक, सातारा और कोल्हापूर, अमरावती, निमाड़ प्रांत यहॉ पर औसतम 75,000 हेक्टर के कुटकी की खेती कि जाती हैं।

क्षेत्र एवं विस्तार :

इस फसल का उत्पादन मुख्यता भारत, जपान, चिन, इजिप्ट, अरब और पश्चिम युरोप जैसे देश मे भी किया जाता है। भारत मे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, पूर्वी उत्तर प्रदेश, कर्नाटक जैसे राज्यो में बड़ी मात्रा मे किया जाता हैं। साल 2005-06 में 0.42 लाख हेक्टर क्षेत्र में इस फसल को लिया गया था।

जैविक गुणतत्व :

कुटकी फसल का पौधा उंचा बढ़ता है, अपनी पौधो की शाखाओ पे बालीयाँ आती है यह पौधा झाडी प्रकार की एक वनस्पती है। कुटकी फसल के पौधो की उंचाई 45-100 सेंमी. होती है और इसके पत्ते लंबे एवं शाखाओ को चिपके हुये होते है। इस फसल के शाखाओ मे बाली आती है, कुटकी का अनाज यह बाली मे सफेद, पिला, लाल या भुरे रंग के दाने जैसा होता है।

मौसम :

यह फसल गरम मौसम मे अच्छि तरह से उत्पादन देता है, आज दुनिया के गरम प्रदेशो मे कुटकी फसल का उत्पादन बड़ी मात्रा मे लिया जाता है, यह फसल कम या ज्यादा बारिश के स्थिति मे अपना अस्तितव बरकरार रखती है इसीलिए यह जलवायु परिर्वतन के बदलाव के लिये अनुकुलीत फसल है जो की सिमांत किसान की सालना जीवीका एवं अन्नसुरक्षा हेतू, मुख्य रूप मे स्थायी विकल्प है।

कुटकी हेतू भुमी का चयन :

कुटकी यह फसल निम्मस्तर से उच्च स्तर की कोई भी जमीन मे अच्छी तरह उगति है सिर्फ रेतीली जमीन इस फसल के लिये अच्छी नहीं मानी जाती। जिस जमिन पर पानी की सही निकासी हो एसी जगह इस फसल के बुआई के लिये चुनना चाहिए।

नस्ल : (Seeds Variety)

कुटकी यह फसल के विभिन्न उन्नत नस्ल उपलब्ध है, जैसे की जीपीयुपी 8. जीपीयुपी 21, के 1, के 2, को 2, को. 3, को 4 एवं को (पी व्ही) 5. अपने क्षेत्र मे जो उपयुक्त हो ऐसे नस्ल के बिज का बुआई के लिये उपयोग करे ताकी ऐसे बिज क्षेत्र के मौसम से अनुकुलीत होते हैं।

फसल पद्धतीयाँ / प्रबंधन :

कुटकी यह फसल को एक फसल या मिश्र फसल द्वारा बुआई किया जा सकता है। जिस प्रदेश में बारिश का प्रमाण निम्मस्तर का है ऐसे प्रदेशो मे कुटकी के साथ गहू/ओट/चना एवं कुटकी- सरसो की फसल मिश्रीत पद्धती द्वारा किया जाता है, जिस प्रदेश मे सिचाई की सुविधा है ऐसे क्षेत्र मे कुटकी-मका-आलु, मका-गेहू-कुटकी, धान-गहू-कुटकी ऐसे फसल के मिलाप से मित्र फसल के द्वारा फसल का उत्पादन लिया जाता है।

जुताई :

बुआई करने वाले जमिन से पिछले फसल की जड़ो तथा जैविक अवषेश को साफ करे, बारीश शुरू होने से पहले खेत को जोत ले और मिट्टी को 4 से 6 सेमी तक लचीला बना ले एवं मिट्टी को एक समान स्तर पे मिला दे। गर्मी के ऋत में फसल लेते समय जमिन को एक बार सिचित करे, कुटकी फसल के लिये हल के द्वारा ज्यादा गहरा जुताई नहीं करे।

बिज का चयन एवं बुआई :

कुटकी फसल बुआई करने हेतू उच्च गुणवत्ता के बिज तथा क्षेत्र के मौसम को अनुकुलीत हो ऐसे बिज का उपयोग करे, बिज बुआई करने से पहले बिज को जैविक बिज प्रक्रिया करना जरूरी है, जैसे की जैविक बिज प्रक्रिया करने के लिये गाय का गोबर, गोमुत्र एवं हल्दी को पानी मे समप्रमाण भिगोकर उसे बुआई वाले बिज को लगाये और दो दिन उसे छाव में सुखाकर बुआई करे।

जिससे की बिज की अंकुरण क्षमता बढती है एवं मिट्टी के हानीकारण घटक और बुरशी से बिज का संरक्षण होता हैं।

बुआई का समय :

खरीफ ऋतु मे बारिश शुरू होने के बाद आम तोर पर जुलाई माह के 15 तारिख तक बुआई करे तथा गर्मी के मौसम से एप्रिल महिने के मध्य तक बुआई करे। गर्मी के मौसम मे रबी मौसम की फसल निकलेने के बाद बुआई करें।

बिज का प्रमाण एवं बिज बुआई की पद्धतीयॉ :

कुटकी फसल की बुआई हाथ से फैलाकर (धुलफेक) या बुआई उपकरण (तिफन) के द्वारा सिधी दिशा मे करे, बिज सिर्फ 3 से 4 सेमी. गहराई मे जमीन के अंदर जाना चाहीये, फसल के दो पक्तिंओ की दुरी 25 सेमी. एवं पौधो की दुरी 10 सेमी. रखे। सिधी दिशा मे बुआई करने से फसल को अंकुरण अच्छा होता है, जिससे की खरपतवार एवं आंतर फसल प्रबंधन अच्छी तरीके से होती है। फसल बुआई के लिये 1 से 12 किलो बि प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त होता है।

एकीकृत पोषण प्रबंधन :

कुटकी फसल का समय बहुत कम होने के कारण अन्य फसल के तुलना मे खाद की मात्रा कम लगती है, ज्यादा उत्पादन के लिये अगर सिचाई की सुविधा उपलब्ध है तो 40 से 60 किलो नत्र 30 किलो स्फुरद एवं 20 किलो पालाश प्रति हेक्टर दे, आधा नत्र एवं पूर्ण पालाश की मात्रा बुआई करते समय देना चाहिए, बारीश, आधारित खेती के लिये सभी खाद की मात्रा का उपयोग आधा करना चाहिए।

सिंचाई का प्रबंधन :

खरीप सीजन के फसल को सिचाई देने की आवश्यकता नहीं है, परंतू बारीश कम होने के स्थिती मे जिस समय फसल मे फल के शाखाओ का विस्तार होना शुरू होता है उस समय सिंचाई करे तो निश्चित रूप से उत्पादन मे बढोत्तरी होकर उत्पादन मे लाभ होता हैं। गर्मी के मौसम मे मिट्टी का प्रकार, हवामान मे होने वाले बदलाव को ध्यान मे रखकर 2 से 4 बार सिंचाई करे, पहली सिचांई 20 से 30 दिन और दुसरी सिंचाई 40 से 45 दिन के अंतराल मे दे, फसल की जडे 3 से 4 सेमी. होने के कारण सिंचाई हलके से करे।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन :

अधिक उत्पादन, सुक्ष्म पोषक तत्वो की गिरावट न हो और फसल संरक्षण हेतु जमीन को घास से नियंत्रीत रखे, कुटकी फसल विकास के 35 दिन तक खेत मे घास को ना निकलने दे, घास को नियंत्रीत करने हेतू 15 से 20 दिन के अंतराल मे खरपतवार जरूरी है, खरपतवार नियंत्रण निंदाई या डवरा के माध्यम से करना चाहिए।

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन

काणी :

यह रोग कुटकी फसल पर बुरशी (सर्फॅसीलोसिका डेस्टरनिस) के द्वारा होता है, यह कुटकी फसल पर आनेवाली महत्वपूर्ण रोग है, जिससे की फसल की फलधारणा के समय पौधो की शाखाएँ छोटी होती है, बुरशी के अंडे फसल काटने से पहले ही फुट जाते है और इस के द्वारा इस रोग का प्रभाव बिज के द्वारा प्रसारीत होता है। इसलिए बुआई से पहले जैविक प्रक्रिया से बिज क्रिया करना जरूरी है।

कभी कभी बॅक्टेरिया जीवाणू के द्वारा फसल पर बिमारी आती है उसके लिये 5% मॅग्नेशियम अरसिनेट 1 ग्राम रसायन प्रति किलो बिजा के लिये अपयोग करे।

किट :

कुटकी फसल पर खोडकिट का प्रभाव दिखाई देता है, फसल जब छोटी है तब इस किट का प्रभाव ज्यादा दिखाई देता है, उस समय निम तेल एवं निम अर्क का उपयोग कर इस किट से फसल को संरक्षीत किया जाता है।

फसल कटाई :

कुटकी यह फसल 65 से 75 दिन के अंतराल मे कटाई के लिये तैयार होती है, जब फसल पूर्ण रूप से परिपक्व हो जाता है तब फसल की कटाई शुरू करनी चाहिए, अगर उपर के हिस्से के दाने परिपक्व होते है परंतू निचे के कुछ दाने परिपक्व नहीं होने पर उपर की फसल निचे गिरणा शुरू होती है ऐसे स्थिती अधिक उत्पादन होने के द्रिष्टी में जल्दी फसल को काट ले, काटकर रखे हुये कुटकी के पौधे को मशिन से हाथ से रगडकर या बैलो के पैरो के निचे तुडवाकर कुटकी बिज को अलग करे।

उत्पादन :

उन्नत बुआई पद्धति का उपयोग करने से सामान्यता 20 से 25 क्विंटल कुटकी अनाज एवं 50 से 60 किलो पशुओ के लिये चारा उपलब्ध है।

कोदो

कोदो यह भारत की पहाडी क्षेत्रो की मुख्य अनाज फसल है, यह फसल कम बारीश के उपलब्धता मे अच्छी रूपसे उत्पादीत होकर किसान को लाभ मिलता है, अवर्षण प्रवण क्षेत्र के लिये यह फसल एक वरदान जैसे साबीत होता है। जल वायु बदलाव के परिणाम स्वरूप आज के स्थिती मे कम होती जा रहीं बारीश के कारण फसल को बडी मात्रा मे नुकसान होता है, जिससे किसान के सालाना जीवीका पर असर पड़ता है। कोदो यह फसल मे सुखे पर नियंत्रन करने की क्षमता बडी मात्रा मे होती है, इसीलिए बारीश आधारित खेती के लिये यह फसल एक वरदान है। इस फसल के

अविकसीत अनाज का उपयोग ना करे। अनाज संग्रहित करने की पद्धती अत्यंत आसान होने के कारण ज्यादा दिन तक इस अनाज का संग्रह कर सकते है एवं सुखे की सिस्थिओ मे इस मुख्यता खादय अनाज करके उपयोग मे लाया जा सकता है।

आंतरिक घटक :

कोदा फसल मे 8.3% प्रोटिन्स, 1.4% स्निग्ध घटक, 65.6% कर्ब और 2.3% राख होती है। इस फसल से निकलने वाली घास निम्मस्तरका होता है जिससे बिज निकालने के बाद 40% भुसा निकलता है।

उदय एवं इतिहास :

कोदो यह एक प्राचिन फसल है और भारत के प्राचिन ग्रंथो मे कोदो फसल का निर्माण दक्षिण-पूर्व एशिया खंड मे है। पॅसपनॅम डायलॅटम इस घास के प्रकार से कोदो अमेरिका, ऑस्टेलिया और दक्षिण आफ्रिका जैसे देशो मे पाया जाता हैं।

क्षेत्र एवं विस्तार :

कोदो यह फसल मुख्यता आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, तालिलनाडू यह राज्य मे उगाया जाता है। भारत मे सन् 2005-2006 मे इस फसल के 2.35 लाख हेक्टर क्षेत्र मे किया गया है जो की मुख्यता मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, तामिलनाडू एवं छत्तीसगढ यह राज्य मे बुआई कि जाती है।

मौसम :

सुखा और गरम मौसम मे कोदो फसल की वृद्धी अधिक गती से होती है, जहॉ पर बारीश कम या अनियमीत होती है ऐसे जगह पर कोदो फसल की पैदावार अधिक होती है क्योकि इस फसल मे सुखे की स्थिती मे अनुकुलीत रहने की क्षमता है। सालाना 40 से 50 सेमी. बारीश के प्रमाण मे भी यह फसल अच्छी तरह से उत्पादन मिलता है।

कोदो फसल हेतु भुमी का चयन :

कोदो यह फसल हलकी या मुख्यता पहाडी क्षेत्र की पत्थर वाली जमीन, ढलान की जमीन, रेतीली जमिन ऐसे क्षेत्र वाली जमीन मे भी अच्छी तरह से विकसीत होती है। मुख्यता यह फसल के लिये जल क्षमता वाली जमीन का चयन करें।

नस्ल :

कोदो फसल के विभीन्न नस्ल उपलब्ध है, जिसमे की हेके 41, जेके 76, जीपी युके 3, जेके 41, जेके 42, जेके55 जीके 1 और 2 आरबी के 155, डीपीएस 48, जेके 155, के 1, को 2, को 3, अेपीके 1, और व्हमबन. अपने क्षेत्र मे अनुरूप तथा उचित परिणाम हेतू उपर दिये गये नसल का उपयोग कर अपेक्षीत परिणाम मिल सकता है।

फसल पद्धतीयॉ/प्रबंधन :

कोदो यह फसल स्वतंत्र रूप से या मिश्रीत फसल पद्धती द्वारा लिया जा सकता है, कोदो फसल के साथ तुअर, तिल, ज्वारी, उडीद जैसे फसल के साथ मिश्र फसल ले सकते है साथ मे सरसो, जवस एवं चना यह फसल के विकल्पो के साथ कोदो की फसल ले सकते है। जैसे की विकल्प फसल निम्मरूप दिये गये है।

कोदो	जवस
कोदो	चना
कोदो	सरसो
कोदो	ओट (बारली)

जुताई :

बारिश से पहले खेत मे अच्छी तरह से हल के द्वारा जुताई कर कर मिट्टी को 4 से 6 सेंमी. तक मुलायम करे जिससे मिट्टी मे नमी रहती है और मिट्टी की जल पर पकड की क्षमता बढती है, इसि के साथ जमिन को एक समान स्तर पर बना ले।

बिज का चयन एवं बुआई :

उत्तर भारत मे कोदो फसल की बुआई आम तौरपर 15 जून से 15 जुलाई के अंतराल मे होती होती है। दक्षिण भारत मे बारीश आधारित खेती मे कोदो फसल की बुआई सप्टेंबर से डिसेंबर के अंतराल मे कि जाती है। कोदो फसल की बुआई सिधी दिशा मे 3 से 4 सेमी की गहराई मे करना चाहिए, दोनो पक्तियो की दूरी 40 से 45 सेमी. एवं पौधो की दुरी 8 से 10 सेमी. रखे, कुल 10 से 15 किलो बिज प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त है, बहुत जगह पर कोदो के बिज हाथ से फेककर (धुलफेक) बुआई की जाती है परंतू यह बुआई की वैज्ञानिक पद्धति नहीं है, बुआई करते समय

एकिकृत पोषण प्रबंधन
(Intergrated Nutrient Management)

बुआई उपकरण (तिफन) से सिधी दिशा मे करें।

जैविक खाद का नियमित रूप से उपयोग करना किसान के लिये एवं मिट्टी के लिये फायदेमंद है, क्योंकि जैविकद खाद से मिट्टी को सुक्ष्म पोषक तत्वो मिलते रहते है जिससे मिट्टी की उर्वरकता वृद्धी होकर अपेक्षीत उत्पादन मे बढोत्तरी होती है। जैविक खाद के उपयोग से मिट्टी का भौतिक विकास होकर जल धारण क्षमता बढती है, बुआई से पहले 5 से 10 टन गोबर खाद या कंपोष्ट खाद जमिन मे डाल दे और बाद मे बखर से उसे मिट्टी मे मिला दे, मुख्यता कोदो फसल को जैविक खाद के द्वारा (40 किलो नत्र, 20 किलो स्फुरद और 20 किलो) पालाश प्रति हेक्टर की दर से मिट्टी मे डाले, खाद की संपूर्ण मात्रा बुआई के वक्त दे।

फसल मे उत्पादन बढोत्तरी हेतु बुआई के बाद 10 से 15 दिन के अंतराल मे जीवामृत खाद की मात्रा नियमीत रूप से देना

जरूरी हैं। इसिके साथ नत्र स्फरद एवं पालाश के लिये जैविक एनपीके देना जरूरी हैं।

सिंचाई का प्रबंधन :

खरीप सिजन मे बुआई किये गये फसल को सिंचाई की जरूरत नहीं है, क्योकि यह फसल बारीश पर आधारित होने के कारण और सुखे की स्थिती मे अनुकुलीत होने कारण सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती हैं। परंतू बारीश की ज्यादा अनियमितत होने के उपलक्ष मे और सिचाई कि सुविधा है तो 1 से 2 बार जरूरतो अनुसार सिचाई करे परंतु खेत मिट्टी मे जल धारण क्षमता होना जरूरी है, खेत मे रूका हुआ अतिरिक्त पानी को निकालने की व्यवस्था करना जरूरी है।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन :

फसल के बुनियादी विकास के दौर में अनावश्यक घास का नियंत्रण करना जरूरी है, जो की फसल के लिये फायदेमंद साबित होगा। बुआई होने के बाद 35 से 40 दिन तक फसल को घास से दुर रखना चाहिए, मुख्यता 15 दिन के अंतराल मे निंदाई करना जरूरी है। जब बारीश ज्यादा होने के स्थिति मे सिधी दिशा मे बुआई किये गये फसल मे डवरे के द्वारा घास को निकाल देना चाहिए जिससे की बडे मात्रा मे घास का नियंत्रण होता हैं और फसल को बढने के लिये सहायता मिलती हैं।

अरगट :

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Pest Management)

कोदो फसल पर अरगट यह रोग बुरशी के कारण आता है, इस रोग के असर वाली फसल का अनाज खादयान्न करके उपयोग करना हानीकारक हो सकता है। इस रोग का मुख्यता जो लक्षण होते है जिसमे पौधो से शहद के जैसा चिपचिपा पदार्थ निकलता है जो की लाल या पिला रंग के जैसा होता है, उसे मधुबिंदु अवस्था कहते है, जिसके कारण बिज पुरी तरह से भरता नहीं है और बिज की जगह काले रग की गठीया तैयार होती है और यह जहरीली होती है। यह रोग का प्रसार बिज के द्वारा होता है (इसिलिए खेत मे एक फसल पद्धति का उपयोग करना चाहिए। बिज निर्माण क्षेत्र मे जब फसल को लेकर मिश्र फसल पद्धति का उपयोग करना चाहिए) बिज निर्माण क्षेत्र मे जब फसल को फुल लगने शुरू होते है तब सुंठ एवं गाय के दुध से बना हुआ जैविक बुरशीनाशक का फुहारा करके इसे नियंत्रीत कर सकते है इसके साथ यह बुरशी की रोकथाम के लिये दशपत्ती घोल का उपयोग कर बुरशी को नियंत्रित करना चाहिए।

काणी :

कोदो फसल पर यह रोग बुरशी के कारण होता है, फसल के पौधे काले होकर पतले पिले रंग से ढक जाते है। रोग का प्रसार बिज के द्वारा ही होता है, इसलिए बुआई से पहले बिज को जैविक बिज प्रक्रिया करना जरूरी है।

तांबेरा :

तांबेरा यह रोग फसल पर बुरशी के कारण होता है, फसल की पत्तो पर हलके हरे रंग की पटटे दिखाई देते है, जिससे की प्रकाशसंश्लेश की क्रिया कम होती जाती है और पौधो का विकास रूक जाता है, इस रोग की मात्रा कम करने के लिये जैविक बुरशीनाशक का उपयोग करे।

किट नियंत्रण

दिमक :

दिमक और खोडकिडा जैसी किट का प्रकोप इस फसल पे होता है इस के नियंत्रण हेतू लमिल, निम तेल या निम अर्क को फसल पर नियमित रूप से फुहारा कर नियंत्रित किया जा सकता हैं।

खोडकिडा :

यह किट फसल को नुकसान पहुचाता है और पौधे कमजोर करता है, इसे नियंत्रीत करने हेतु दशपर्णी 1 लिटर घोल 15 लिटर पानी मे डालकर फुआरा करे, किट नियंत्रण हेतु लमिल, निम अर्क जैसे जैविक किट नियंत्रको का नियमीत उपयोग कर यह किट के प्रभाव को रोका जा सकता हैं।

फसल कटाई :

कोदो यह फसल 60 से 70 दिन के अंतराल में कटाई के लिये तैयार होती है, जब फसल के दाने परिपक्व अवस्था मे आ जाये तब इसके पौधे को निचे से काटकर उसे के गठठे बांध ले और माशिन के द्वारा या बैलो के पैरो के निये डालकर उये तुडवाकर अनाज का पौधो से अलग करे।

उत्पादन :

कोदो फसल का सभी शाश्त्रोक्त विधी से किया जाने के बाद सामान्यता 8 से 15 क्विंटल प्रति हेक्टर के दर से उत्पादन होता है, साथ मे 15 से 40 क्विंटल घास का उत्पादन किसान को होता है। अनाज का संग्रहन करते समय अच्छी तरह से सुखा कर करना चाहिए जिसमे 15% से 12% के उपर नमी नहीं होना चाहिए।

रागी - नाचनी - नागली

रागी फसल को नाचणी या नागली भी कहॉ जाता है, इंग्लिश मे इसे फिंगर मिलेट भी कहते है। भारत मे दुयम घास वर्गीत फसल मे रागी महत्वपूर्ण फसल हैं। यह भारत के पहाडी क्षेत्र की मुख्य फसल हैं। यह फसल समंदर तल से 2100 मिअर की उंचाई तक लिया जा सकती है। मुख्यता कुछ पहाडी क्षेत्र मे रागी को मुख्य फसल के रूपमे लिया जाता है। इस फसल का उपयोग अनाज एवं घास के लिये किया जाता हैं। उत्तर भारत मे रागी का उपयोग चपाती बनाने के लिये किया जाता हैं तो दक्षिण भारत मे केक, पुडिंग और मिठे पदार्थ बनाने मे उपयोग मे लाई जाती है, भिगी हुई रागी मुख्यता छोटे बच्चे और गर्भवती स्त्रि को मुल्यवर्धीत खादय के रूपमे उपयोग मे लाया जाता हैं।

आंतरिक घटक :

रागी में 9.2% प्रोटिन्स, 1.28% स्निग्ध घटक, 76.22% प्रोटीन्स, 2.24% मुलतत्वो, 3.90% राख एवं 0.33 कॅल्शीयम की मात्रा होता है। साथ मे व्हिटॅमिन ए आरे बी कुछ मात्रा में होते है। मधुमेह रोगीओ के लिए रागी का सेवन लाभ दायक होता है, इससे निकलने वाला हरा घास जानवरो के लिये अत्यंत उपयोगी साबीत होता है जो की अत्यंत सुगंधीत होने के कारण जानवर यह घास बिना बेकार किये खा लेते हैं।

उद्‌य एवं इतिहास :

डॉ. कॅनडोली (1886) इनके शोध के अनुसार रागी यह फसल का निर्माण भारत देश से हुआ है, यह फसल उत्तर भारत में दिखने वाला इल्युसिन इंडिका नामक घास से तयार हुआ हैं, यह फसल का भारत से ॲबसिना और आफ्रिका देश मे प्रसार हुआ हैं। (व्हौव्हिलो 1951) एवं मेहरा (1962) के अनुसार यह फसल आफ्रिका देश का है एसा शोध लयागा हैं)

क्षेत्र एवं विस्तार :

रागी यह फसल भारत मे बडी मात्रा मे लि जाने वाली फसल है, अफ्रिका, श्रीलंका, मलेशिया, चिन ओर जपान इस देश मे रागी का उत्पादन बडे मात्रा में लिया जाता है।

भारत मे रागी 1979-80 मे 2.58 मिलीयन हेक्टर क्षेत्र पर लि गई जिसका उत्पादन 2.70 मिलीयन टन था।

कर्नाटक, तामिलनाडु, महाराष्ट्र, ओरिसा, बिहार, उत्तर प्रदेश, और हिमाचल प्रदेश मे रागी फसल को लिया जाता हैं।

महाराष्ट्र के पहाडी क्षेत्र मुख्यता ठाणे, कुलाबा, रत्नागिरी, नासिक, कोल्हापूर, पुणे, और सातारा जैसे जिलो मे रागी फसल का उत्पादन किया जाता हैं। महाराष्ट्र में 1979 से 1980 तक 2.2 लाख हेक्टर क्षेत्र मे 2.0 लाख मेटीक टन का उत्पादन था तो साल 2008-09 में 13.81 लाख हेक्टर क्षेत्र में 20.40 लाख टन उत्पादन हुआ था जो की प्रति हेक्टर उत्पादकता 1477 किलो थी।

जैविक गुणतत्व :

रागी यह फसल उची बढने वाली फसल है जो की 60 से 70 सेमी. तक बढती है, रागी फसल की जडो का विकास बडे मात्रा में तंतुमय होने के कारण मिट्‌टी की जल धारणा बढती है, रागी फसल में बड़े मात्रा मे शाखाये फुटती है और उसपर 2 से 8 तक बालीयॉ आती है। फसल के पत्ते लंबे आकार होकर पत्तोपर बाल जैसे दिखाई देते हैं। फसल की शाखामे बालीयॉ होती है जिसपर 4 से 5 फुल लगते है, फुल की अवस्था पुरी होने के लिये 6 से 8 दिन का समय लगता है, रागी यह फसल स्वयंपरागी करण करती हैं।

मौसम :

रागी यह फसल समंदर स्तर से 2100 मीटर की ऊचाई पर पहाडी क्षेत्र मे लिया जा सकता है, यह फसल 50 से 100 सेमी. बरीश की स्थिती मे भी लिया जा सकता है, बारीश का प्रमाण ज्यादा होने बाद अच्छी जल धारण क्षमता वाली जमीन मे यह फसल लिया जा सकता है। यह फसल बारीश पर आधारित एवं सिचाई के द्वारा भी लगाई जा सकती हैं।

रागी फसल हेतु भुमी का चयन :

रागी यह फसल के लिये निम्नस्तर के जमीन से भारी जमीन तक लिया जा सकता है, ज्यादा काली जमीन, पानी न रूकने वाली जमीन इस फसल के लिए लाभदायक नहीं हैं।

नस्ल :

रागी फसल के विभीन्न नस्ल उपलब्ध है जैसे की विभिन्न प्रदेश के अनुसार नस्ल का चुनाव होता हैं।

कर्नाटक	- आयएनडिऐएफ 8,9 एम.आर. 1,6
तामिलनाडू	- जीपीयु-28 का 7,10,11,12,13,14,14 ट्राय - 1
आंध्रप्रदेश	- पदमारती, मारूती, कल्याणी, गोदावरीएकेपी-2
महाराष्ट्र	- भयरावी, जीपीयु 45, 67, फुले नाचणी, डीपील-1 (पांढरी) डिपील - 1 (ब्राउन)
मध्यप्रदेश	- जीपीयु 45
उत्तर प्रदेश	- केएम 65, चमपावथी
बिहार	- बी आर 407
ओरीसा	- सुकरा, चिका
छत्तीसगड	- व्ही. एल. 2 जी. एन. 3
गुजरात	- जी.एन. 2, जी.एन. 3
झारखंड	- बी.एम. - 2 जी.पी.यु.-28

फसल पद्धतियाँ/प्रबंधन :

यह फसल मिश्र फसल पद्धति द्वारा लिया जा सकता है, जिसमे जवार, बाजरा, तेलबिज जैसे फसल के साथ लिया जा सकता है। पहाड़ी क्षेत्र मे सोयाबिन और रागी की बुआई कि जाती है, सिचाई की सुविधा होने पर विभिन्न फसल के साथ मिश्र फसल द्वारा उत्पादन लिया जाता है। जैसे की तंबाखु मिरची, सब्जियाँ, हल्दी, चना, जवस, सरसो ऐसे फसल के साथ रागी की फसल का

उत्पादन होता हैं।

जुताई :

रागी फसल की बुआई करने से पहले खेत की अच्छी तरह से हल जुताई करे, हल चलाने के बाद खेत की मिटटी का एकसमान स्तर का बनाले ताकी मिटटी मे जल को रोककर रखने की क्षमता बढ जाये। हल करते समय ये ध्यान मे रखे की खेत में कोई भी प्रकार का घास ना हो क्योंकि रागी फसल के बिज बहोत छोटे होते है जिसके कारण बिज के अंकुरण पर बुरा असर पड सकता हैं।

बिज का चयन एवं बुआई

बुआई का समय :

भारत के कुछ राज्यो मे रागी फसल सिचाई के द्वारा लिया जाता है, जिसके कारण इस फसल को एक से ज्यादा मौसम मे लिया जा सकता है, जल्दी आनवाली एवं बारीशपर निर्भर फसल की बुआई एप्रिल या मई महिने मे की जाती है, खरीफ सिजन मे बारीश आने के बाद जुन महिने मे बुआई किया जाता है, जब की अगर जून जुलाई महिने मे बारीश नहीं आई तो ऑगस्ट महिने तक बुआई कर सकते है। बारीशपर निर्भर फसल की बुआई जल्दी से जल्दी करना जरूरी है क्योंकि पौधो की विकास के लिये जल सिचाई का तनाव नहीं पड़ना चाहिए।

उत्तर भारत के पहाड़ी क्षेत्र मे रागी फसल की बुआई जून माह के बिचमे करना चाहिए, कर्नाटक, तामिलनाडू, और आंध्रप्रदेश जैसे राज्यो मे यह फसल रबी सीजन मे लि जाती है, जिसके कारण इस फसल की बुआई सप्टेम्बर और ऑक्टोबर मे किया जाता हैं।

बिज का प्रमाण :

रागी फसल का बिज 8 से 10 किलो प्रति हेक्टर की दर से पर्याप्त है, बिज का फसल रोपण के लिये सिधी दिशा मे बुआई करे, जब नर्सरी मे यह फसल लेना है तो 4 किलो बिज प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त होता है और उसके बाद इस फसल का पूर्नरोपण किया जाता है, बिज बुआई से पहले गाय का गोबर , गोमुत्र हल्दी और राख का घोल बनाकर इस बिज को लगाये और दो दिन सुखने के बाद बुआई करे जिससे बिज की अंकुरण क्षमता मे बढोत्तरी होती है और किसान को अपेक्षीत परिणाम मिलता हैं।

बुआई की पद्धतियाँ :

रागी फसल की बुआई 3 से 4 सेमी. गहरी एवं सिधी दिशा मे कि जाये, जिससे की खेत मे खरपतवार नियंत्रण एवं फसल का पोषण सही होता है। फसल की बुआई करते समय पौधो के पंक्तियों की दुरी 20 से 25 सेमी. एवं पौधो की दुरी 8 से 10 सेमी. रखना चाहिए।

यह फसल के लिये जैविक खाद का उपयोग करना महत्वपूर्ण है, खेत हल चलाने के बाद यह फसल वाली जमिन मे 5 से 10 टन गोबर खाद या कंपोष्ट खाद प्रति हेक्टर की दर से दे,

एकिकृत पोषण प्रबंधन

(Intergrated Nutrient Management)

जिससे मिटटी के जैविक सुक्ष्म पोषण तत्वो एवं भौतिक गुणोमे बढोत्तरी होकर जल धारण क्षमता मे वृद्धी होती हैं। मिटटी मे खाद देने से पहले मिटटी का परिक्षण करना जरूरी है, जिससे किसान को जानकारी होती है कि मिट्टी मे कौनसा तत्वो की कमी है इस फसल के लिये जमिन मे (50 से 60 किलो नत्र, 30 से 40 किलो स्फुरद और 20 से 30 किलो पालाश प्रति हेक्टर की दर से दे, स्पुरद एवं पालाश खाद का पूरा डोज और नत्र खाद का आधा डोज बुआई के वक्त दे और आधे नत्र का डोज आधा आधा कर 30 से 50 दिन के अंतराल में दे) बारीश आधारित क्षेत्र के लिये 25 से 30 किलो नत्र, 15 से 20 किलो स्फुरद और 10 से 15 किलो पालाश प्रति हेक्टरी देणा चाहिए। बारीश आधारित क्षेत्र मे पूरे खाद का डोज 8 से 10 सेमी. गहराई से बुआई के करते समय देना चाहिए।

जैविक नत्र स्फुरद एवं पालाश परिपूर्ती के लिये जिवामृत, स्थानीय सुक्ष्म जिवानु घोल, जैविक एनपीके तथा केचुआ जल का उपयोग करना जरूरी है जिससे की मिटटी मे जिवाणू ओ की संख्या बढकर मिटटी की उर्वरकता मे बढोत्तरी होती है और स्वस्थ फसल का निर्माण होकर उत्पादन बढता हैं।

सिंचाई का प्रबंधन:

खरीफ सिजन मे लिये हुये रागी फसल को सिंचाई करने की जरूरत नहीं है, परंतू बारीश की अनियमीतता हो या बारीश नहीं होती है, ऐसे स्थिती मे पौधो को फुल आते समय सिंचाई देना जरूरी है, जिससे फसल के उत्पादन मे अच्छा असर होता है, अगर ज्यादा बारीश होती है तो बेड बनाकर बुआई करना चाहिए जिससे अतिरिक्त बारीश का जल बाहर निकल जायेगा।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन :

रागी फसल के शुरूवाती विकास की दौर मे खरपतवार प्रबंधन करना जरूरी है जिससे फसल के विकास मे सहायता प्राप्त होती है, बुआई होने के 25 दिन बाद निंदाई करना जरूरी है, पूरे फसल के समय 2 से 3 बर निदाई करना चाहिए जिससे फसल के विकास मे सहयोग प्राप्त होता हैं।

रागी फसल पर मुख्यता तांबेरा, मानमोडी और काणी जैसे रोग आत हैं।

तांबेरा :

यह रोग रागी फसल पर पीरिकुलॅरीया बुरशी के कारण होती है, इसका प्रभाव पौधो छोटे होते समय ही होता है जिससे फसल के पत्तो पर हलका हरा रंग से पिले रग के धब्बे पडते है और अगर इसका प्रभाव ज्यादा है तो फसल के पौधो की शाखाओ पर भी

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Pest Management)

असर करना शुरू करता है, जिसका असर अनाज फसल पर होकर अनाज हलका हो जाता है और अपेक्षीत उत्पादन मे गिरावट आती हैं। इस राग के प्रतिबंध तथा नियंत्रण के लिये गाय का गोबर, गोत्र हल्दी का घोल बनाकर बिज प्रक्रिया करे, जिससे बिज अंकुरण तथा बिज की प्रतिरक्षा करने की क्षमता मे बढोत्तरी होती है और फसल बिज अंकुरण तथा बिज की प्रतिरक्षा करने की क्षमता मे बढोत्तरी होती है ओर फसल रोगो से दुर रहती है, रागी फसल को रोग तथा अलग अलग बिमारी से दुर रखने के लिये अच्छी नस्ल के बिज का उपयोग करें।

मानमोडी :

यह रोग कोचीओबेलस नाडूलोस यह बुरशी के कारण होता है, जब बारिश की स्थिती अधिक होती है तब यह रोग का प्रभाव ज्यादा दिखाई देता हैं, जिसे फसल के सभी विकास अवस्था मे एवं फसल के सभी पौधो के उपर यह रोग का प्रभाव दिखाई देता हैं।

प्रबंधन :

इस रोग के नियंत्रण एवं प्रबंधन हेतु जैविक बुरशीनाशक का उपयोग करना चाहिए। बुरशी नाशक के लिये निम तेल या निम अर्क का नियमीत रूप से उपयोग करने से रोग का नियंत्रण होता हैं।

केवडा रोग :

यह रोग स्केलरोफथोरा मॅकरोस्पोरा इस प्रकार की बुरशी के कारण होता है, इसके असर कुछ जगह ही होता है जिससे पौधो का विकास रूक जाता है और पत्ते सुख जाते हैं।

प्रबंधन/नियंत्रण :

1. बुआई के जगह साफ सफाई रखाना जरूरी हैं
2. सौंठ और गाय का दुध से बना हुआ जैविक बुरशीनाशक का उपयोग कर रोग का नियंत्रण कर सकते हैं।

किट प्रबंधन

खोडकिट :

खोडकिट के नियंत्रण एवं प्रबंधन हेतु 10% असर दिखने के बाद या फसल निकलने के 30 दिन बाद दशपर्णी घोल या लमील किटनियंत्रको का उपयोग करे।

मावा :

मावा किट के नियंत्रण के लिये लमित यह जैविक किट नियंत्रको का उपयोग करे तथा जाल फसल पद्धतीयॉ का रोपण कर एकीक्रत किट व्यवस्थापण का प्रयोग करें।

बाल वाली इल्ली :

यह इल्ली बहोत सारे फसल पर दिखाई देती है, इल्ली बडी होने के बाद पुरे खेत में फैल जाती है और फसल की पत्तीयॉ खाकर फसल को नुकसान करती है। एक खेत पुरा नष्ट कर दुसरी खेत की और प्रस्थान करती है जिससे फसल को पुरी तरह से नुकसान पहुचाती हैं।

नियंत्रण :

जैविक किट नियंत्रण विधी के द्वारा हर 5 से 7 दिन के अंतराल से लमिल घोल को फसल पर छिडक दे साथ ही 7 से 10 दिन के अंतराल में दशपर्णी का नियमीत रूप से छिडके, इस के कारण इल्लीयाँ फसल को खा नहीं पायेगी और भुखमरी के कारण इल्लीओ का प्रभाव कम होते जायेगा जिससे फसल को नुकसान से बचाया जा सकता हैं।

टोड :

इस किट के प्रभाव से फसल के पत्ते तथा पौधे को खा लेते है, पूरी तरह से परिपक्व टोड किट से ज्यादा नुकसान होता है, इस किट के नियंत्रण के लिये जमिन को गर्मी के मौसम मे हल के द्वारा जुताई करना चाहिए जिससे की मिटटी के अंदर अंडे एवं कोष मृत हो जाते है और फसल पर प्रभाव कम होता है। इसके प्रबंधन एवं नियंत्रण हेतु जाल फसल पद्धति का उपयोग करे जिसमे शत्रु किट एवं मित्र किट के होने से इस किट का नियंत्रण जैविक पद्धति द्वारा किया जा सकता है, साथ मे दशपत्ती घोल, निम अर्क एवं लमित जैसे घोल को फसल पर नियमीत रूप से छिडकना चाहिए, साथ मे खेत मे पिला स्टिकी बोर्ड, प्रकाशजाल को लगाये और उसके निचे घासलेट भरा हुवा पानी का बर्तन रख दे जिससे इस किट को नियंत्रीत करने मे आसानी होगी और फसल को नुकसान से बचाया जाता जा सके।

फसल कटाई :

विभिन्न क्षेत्रो के मौसम के अनुसार एवं जमिन के दर्जे के अनुसार रागी फसल 120 से 135 दिन के अंतराल मे तैयार होती है, फसल को दो तरीके से निकाला जाता हैं, जिसमे की फसल की बाली को दराती से काट लेना या पुर पौधा ही निचे से दराती से काटना यह दो प्रकार से करते है, काटने के बाद 3 से 4 दिन तक धुप मे इसको सुखा दे और अच्छा सुखन के बाद बैल के पैरो के निचे डालकर बाली को तुडवा ले उसके बाद सफाई के द्वारा बाली से रागी को अलग कर दे।

उत्पादन:

उन्नत खेती प्रथाओ को अनुकरण पर आम तौर पर 20 से 25 क्विंटल रागी का अनाज एवं 60 से 125 क्विंटल घास का उत्पादन प्रति हेक्टर से मिलता है तथा बारीश आधारित क्षेत्र मे 6 से 12 क्विंटल रागी एवं 12 से 18 क्विंटल घास का उत्पादन प्रति हेक्टर होता है।

बाजरी

बाजारी यह फसल धास प्रजाती क्षेत्र मे आती है, यह फसल की समयसिमा अत्यंत कम होती है एवं कम पानी के उपलब्धता मे भी अच्छी पैदवार मिलती हैं । कृषि आपातकाल एवं सुखे की स्थिती मे कृषि क्षेत्र का उचित प्रबंधन हेतु यह फसल किसान के पास एक मुख्य विकल्प के रूपमे कार्य करती है। यह फसल भारत मे सिमांत गरीब किसान एवं ग्राहको के लिये पोषण का एक विकल्प है जिसमे खनिज एवं विभिन्न पोषकतत्व से परिपूर्ण है जो की मनुषय के स्वस्थ शरीर के लिये लाभदायक साबित होता है। यह फसल की समय सिमा 70 से 90 दिन अंतराल की होती है, बिज नस्ल एवं स्थानीय मौसम के उपलक्ष मे फसल परिपक्वता की सिमा कम ज्यादा होती हैं।

आंतरिक घटक:

बाजरी मे प्रोटिन्स एवं फायबर की मात्रा अधिक होती है, जिससे उर्जायुक्त अन्न बनता है, इसि के साथ एमिनो एसिड, बी कॉम्पलेक्स, फोलीक ॲसिड जैसे घटक के कारण यह अनाज पोषण के लिये महत्वपूर्ण अनाज हैं।

उदय एवं इतिहास:

दुनिया मे प्रचिन काल से बाजरी के फसल की खेती कि जाती है, ऐसा कहॉ जाता है की बाजरी फसल का दक्षिण आफ्रिका मे उदय हुआ है, भारत मे लगभग इ.स. पूर्व 2000 से बाजरी का उत्पादन लिया जाता है, बाजरी मे पोषक तत्वो के साथ ग्लुटेन-फ्रि स्टेअस होता के हैं जिसके कारण बाजरी एक पोषण खादय के रूप में लोकप्रिय हुआ है। आज भारत बाजरी के व्यापार मे अग्रेसर है, दुनिया मे चीन और नायजेरिया जैसे देश मे बाजरी के उत्पादन एवं व्यापार बडी मात्रा मे होता हैं।

बाजरी फसल के लिये जमिन का चयन :

बाजरी के फसल के लिये निम्मस्तर से उच्चस्तर तक किसी भी प्रकार की जामिन उपयुक्त होती है, परंतू जिस जामिन की जल धारण क्षमता अच्छी है ऐसे जमिन का बाजरी फसल लगाने के लिये चयन करे, जिससे की मिट्टी के सुक्ष्म पोषण तत्वो से फसल का विकास सही मात्रा में हो।

क्षेत्र एवं विस्तार :

यह फसल का उत्पादन मुख्यता भारत मे मध्य भारत जैसे महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक और उत्तर भारत मे लिया जाता हैं।

मौसम:

यह फसल सुखा प्रवण क्षेत्र के लिये सबसे अच्छा विकल्प हे, 40 से 60 सेमी. बारीश के प्रमाण मे भी बाजरी फसल की अच्छी पैदावार होती है जो की सुखे से अनुकुलीत है यह फसल से किसान की आजीवीका को स्थायी रूपसे सक्षम करती है।भारत मे मुख्यता बारीश आधारित खरीफ के मौसम मे इस फसल की बुआई होती है एवं सिचाई की पर्याप्त सुविधा होने पर रबी मौसम मे इस फसल की बुआई होती हैं।

नस्ल:

बाजरी के फसल के लिये विभिन्न नस्ल के बिज उपलब्ध है, परंतु संकर बिज न लेते हुये उन्नत बिज का उपयोग करना जरूरी है, जो की अपने क्षेत्र के मौसम, मिटटी एवं खेत के मित्र जिवाणू के लिये अनुकूल होते है, अपने क्षेत्र मे मौसम एवं मिटटी से अनुकूल बिज का चुनाव करे जिससे जलवायु बदलाव के कारण आये हुये बदलाव मे स्थायी रूप से कार्य करती हैं। उन्नत बिज के लिये आयसिटीप - 8203, आयएमपी समृद्धी 92901, पीपीसी-6 (परभनी संपदा) एवं एबीपीसी -4-3 जैसे उन्नत बिज उपलब्ध है, ऐसे बिज का अच्छी उपज के लिये चुनाव करे।

फसल पद्धतियॉ/प्रबंधन:

बाजरी यह फसल को एक फसल या मिश्रीत पद्धति द्वारा बुआई करे, मुख्यता बाजरी को मुख्य फसल के साथ मिश्रीत खेती विधी द्वारा बुआई किया जाता है। महाराष्ट्र मे यह फसल मुख्य फसल के साथ जैसे की कपस, तुअर, सोयाबिन, मुंगफल्ली ऐसे फसल के साथ बाजरा की बुआई करते है। रबी मौसम मे चना, सुरजमुखी जैसी फसल के साथ बाजरी फसल लिया जाता हैं।

जुताई:

फसल लगाने से पहले जमिन मे रहने वाली पिछले साल की फसल के अवषेश को साफ करे, गर्मी के मौसम मे जमिन को 15 से 20 सेमी. गहराई से अच्छी तरह हल से जोतना चाहिए उसके बाद बख्खर से 2 से 3 बार जमिन का स्तर एकसमान करे जिससे मिटटी मे जल धारण (बाद बख्खर से 2 से 3 बार जमिन का स्तर एकसमान करे जिससे मिटटी मे जल धारण) क्षमता को बढावा मिलेगा और बारिश की अनियमितत मे मिटटी मे नमी रहेगी रहेगी जो फसल के पोषण के लिये सहायक होगी।

बिज का चयन एंव बुआई:

बाजरी फसल की बुआई करने हेतु उच्च गुणवत्ता प्रतिके बिज तथा क्षेत्र के मौसम को अनुकुलीत हो ऐसे बिज का उपयोग करे, बिज बुआई करने से पहले बिज को जैविक बिज प्रक्रिया करना जरूरी है, जैसे की जैविक बिज प्रक्रिया करने के लिये गाय का गोबर, गोमुत्र एवं हल्दी को पानी मे समप्रमाण में भिगोकर उसे बुआई वाले बिज को लगाये और दो दिन उसे छाव मे सुखाकर

बुआई करे। जिससे बिज की अंकुरण क्षमता बढती है एवं मिटटी के हानीकारण घटक और बुरशी से बिज का संरक्षण होता है।

बुआई का समय:

खरीफ ऋतु मे बारिश शुरू होने के बाद आम तौर पर 15 जून से 15 जुलाई तक बुआई करे एवं रबी मौसम मे सिचाई की सुविधा होने पर बुआई करे।

बिज का प्रमाण एवं बिज बुआई की पद्धतियाँ:

बाजरा फसल की बुआई, बुआई उपकरण (तिफन) के द्वरा सिधी दिशा मे बुआई कर, बिज की बुआई सिर्फ 2 से 3 सेमी. गहराई में करे, फसल के दो पक्तिंयो की दुरी 45 सेमी. एवं पौधो की दुरी 10 से 12 सेमी. रखे। सिधी दिशा मे बुआई करने से फसल को अंकुरण अच्छा होता है, जिससे की खरपतवार एवं आंतर फसल प्रबंधन अच्छी तरीके से होता है। फसल बुआई के लिये 3 से 4 किलो बिज प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त होता है, जिसमे सभी खेत मे बिज की बुआई के लिये बिज के साथ बारीक रेती को मिला दिया जाये।

बाजरा फसल बुआई करने से पहले जब हल से जुताई होती है

एकिकृत पोषण प्रबंधन
(Intergrated Nutrient Management)

उसके बाद जमिन मे 10 से 15 बैलगाडी अच्छा परिपक्व गोबर खाद या कंपोष्ट खाद प्रति हेक्टर के दर से डाल दे और बख्खर से उसे मिटटी मे मिला दे। बुआई होने के बाद जैविक पद्धति द्वारा खाद की मात्रा डाले, (जिसमे निम्मस्तर की जमीन के लिये 40 किलो नत्र, 20 किलोस्फुरद प्रति हेक्टर की दर से दे और मध्यम जमि के लिये 60 किलो नत्र, 30 किलो स्फुरद प्रति हेक्टर की दर से देना चाहिए। बाकी बचा हुआ आधा नत्र का हप्ता 25 से 30 दिन के अंतराल मे दे) जैविक खपाद की उपलब्धता के अनुसार जीवामृत, एनपीके जैविक या स्थानीय सुक्ष्म जीवाणु के घोल का प्रयोग करे। जैविक का हर 7 से 10 दिन के अंतराल मे उपयोग करने से किसान को निश्चित प्रकार से उत्पादन मे बढोत्तरी होती हैं।

सिचाई का प्रबंधन:

खरीफ सीजन के फसल को सिचांई देने की आवश्यकता नहीं है, परंतू बारीश कम होने के स्थिती में या बारीश कम और फसल मे फल धारणा होने का समय है उस वक्त 20 से 30 दिन की फसल आयु मे सिचाई करे दुसरी सिचाई 35 से 45 दिन के अंतराल मे और तिसरी सिचाई 60 से 65 दिन के अंतराल में करे।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन:

अधिक उत्पादन एवं सुक्ष्म पोषक तत्वो की गिरावट न हो और फसल संरक्षण हेतू फसल के जमीन के घास से नियंत्रीत रखे, बाजरी फसल विकास के 30 दिन तक खेत मे घास को ना निकलने दे, घास को नियंत्रीत करने हेतू 10 से 15 दिन के अंतराल मे खरपतवार जरूरी है, खरपतवार नियंत्रण निंदाई या डवरा के माध्यम से करना चाहिए। 45 दिन के बाद खेत मे निंदाई या डवरा नहीं करें।

खोडमख्खी:

यह किट के उपर के हिस्से मे काले धब्बे होते है, यह पौधो के

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Pest Management)

अंदर जाकर उसे खाती है, उस के कारण पौधो का उपर का भाग सुक जाता है, इसके नियंत्रण हेतु खरीफ मौसम मे जल्दी से बुआई करे, ज्याद प्रभाव होने पर लमित या दशपत्ती घोल का उपयोग करे।

खोडकिट:

यह इल्ली कुछ साफेद रंग जैसी होती है, जो पौधो के अंदर जाकर उसे खाती है जिससे पौधो का उपर का हिस्सा सुक जाता है, उसे डेड हार्ट कहॉ जाता है इसके नियंत्रण हेतू उपर दिये गये उपाय करें।

सोस या हिंग:

सोस या हिंगे यह काले या हरे रंग के होते है उनके उपर पटटे होते है, यह किट बाजरी की फसल में फल धारणा के समय आते है और सुबह पुंकेसर खाते है जिसके कारण भुटटे मे दाने भरते नही, ऐसे वक्त भुटटोपर दशपत्ती घोल का फुआरा करे।

रोग एवं प्रबंधन

केवडा या गोसावी:

इसका प्रसार बिज एवं हवा के द्वारा होता है, फसल के पत्ते हलके से पिले होते है और पत्तो के निचले हिस्से पे बुरशी चढती है इस अवस्था को केवडा कहते है, उपर के पत्ते पिले होंकर फटकर सुक जाते है, जिससे पौधो का विकास रूक जाता है, भुटटे मे दाने भरने के बजाय वहाँ बाल के जैसे दिखने वाली वनस्पती से भर जाते हैं, इसके लिये जैविक प्रक्रिया द्वारा सुंठ एवं गाय के दुध से बना हुआ जैविक किटनियंत्रक का उपयोग करें।

अरगट :

इस रोग का प्रसार बिज एवं हवा द्वारा होता है, फल आते समय भुटटो के अंदर से शहद के जैसा चिपचिपा पदार्थ निकलता है जो लाल या पिले रंग जैसा होकर गाडा होता है, उसे मधुबिंब अवस्था कहते हैं। जिसके कारण भुटटो मे दाने भरते नहीं है और दानो की जगह कठिण गाठीयाँ तैयार होते है जो कि जहरीली हो सकती है। ऐसे वक्त उपर दिये हुये जैविक बुरशीनाशक का उपयोग करे एवं रोग वाली भुटटे को निकाल दे।

फसल कटाई:

बाजरी फसल के भुटटे के दाने रंग बदलकर कडक, सुखे हुये और कालीसी छटा आ जाये तो फसल परिपक्व गई हैं, एसा समज ले उसके बाद भुटटो को दराती से काट ले और धुप मे अच्छी तरह से सुखा दे। सभी फसल को काटने के बाद थ्रेशन माशिन या बैलो के पैरो के निचे तुडवाकर भुटटो से बाजरी के अनाज का अलग करे।

उत्पादन :

उन्नत बुआई पद्धति का उपयोग करने से सामान्यता 19 से 25 क्विंटल बाजरी अनाज का प्रति हेक्टर से उत्पादन होता है, सिंचाई के द्वारा 25 से 35 क्विंटल प्रति हेक्टर से अनाज होता हैं। जिसमे 40 से 55 क्विंटल प्रति हेक्टर पशुओ के लिये चारा उपलब्ध होता हैं।

जवार

जवार यह फसल महाराष्ट्र एवं मध्यप्रदेश की महत्वपूर्ण खादय अनाज की फसल है, जिसका उपयोग मुख्यता खादय अनाज के लिये एवं जानवरो के घास के लिये होता है। यह फसल खरीप या रबी ऐसे दोनो मौसम मे लेते है, दुनिया मे धान, गेहू, मका और बार्ली फसल के बाद पाचवे नंबर पे सबसे ज्यादा उत्पादित होने वाली फसल है जवार। जवार फसल का पोष्टीक तत्व मका फसल जैसा होने के कारण पशु खादय करके इसे महत्व प्राप्त होता है, जवार फसल का उपयोग इथनॉल निर्मीती मे किया जाता है। यह फसल खुखा प्रवण क्षेत्र के लिये अनुकुलीत होती है इसी लिये इस क्षेत्र के किसानो मे लोकप्रिय है। जवार फसल का उपयोग अल्कोहोल, स्टार्च उत्पादन, चिपचिपा पदार्थ तयार करना और पशु खादय में उपयोग किया जाता है जिससे सुखा एवं गिला दोनो प्रकार के स्वरूप मे पशुखादय मिलता हैं। यह फसल की समयसिमा 110 से 120 दिन की होती है विभिन्न बिज एवं मौसम के अनुसार के फसल की परिपक्वता की सिमा कम ज्यादा होती है।

आंतरिक घटक:

जवार फसल मे कॅल्शीयम, लोह, पॉटेशियम, फॉस्पोरस, प्रोटीन्स एवं फायबर की मात्रा होती है एवं ॲन्टी ऑक्सिडंट प्रदान करती है, इसमे व्हिटॅमिन बी के साथ रायबोलाव्हिवीन होता है, भारत मे जवार की रोटी लोकप्रीय है, इसी के साथ वजन कम करने के लिये उपयोगी हैं। 100 ग्राम जवार के अनाज में 32.9% कैलोरीज , 72% कार्बाहाइड्रेटस, 3% फेट एवं 11% प्रोटीन पाया जाता हैं।

उदय एवं इतिहास :

इस फसल की 25 प्रजाजीओ मे से 18 प्रजाती ऑस्ट्रलिया की मुल रूप से है, जिससे कुछ प्रजातिओ का भारत मे और बाकी आफ्रिका, एशिया जेसे देशो मे विस्तार हुआ हैं। इस फसल के बिज का प्रमुखता से पशुओ के खादय के लिये उपयोग होता है एवं बडी मात्रा मे मनुष्य के खादय के लिये उपयोग होता है। जवार फसल का उदय भारत मे बरसो साल पहले हुआ है, भारत के लोग खादयान्न एवं पशु खादय के लिये इस फसल पर आश्रीत है।

जमिन का चयन:

जवार फसल वर्षा आधारीत फसल है जिसके लिये मध्यम से गहरी अच्छी जल धारण करने वाली जमिन का चुनाव करना जरूरी है, गर्मी के मौसम मे 3 से 4 बार गहराई से बखर से मिटटी को बना ले और खेत को हल के द्वारा जुताई कर सभी पुराने फसल के अवषेश को से साफ करे।

क्षेत्र एवं विस्तार :

यह फसल का उत्पादन मुख्यता भारत मे मध्य भारत जैसे की महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरीयाना, जैसे राज्यो मे बडी मात्रा लिया जाता हैं।

मौसम:

जवार यह फसल उष्णकटीबंधीय फसल है, यह फसल को 25 से 32 डिग्री सेल्सीयस के तापमान मे यह फसल का अच्छा उत्पादन होता है परंतू 16 डिग्री से कम तापमान नहीं होना चाहिए 40 से 60 सेमी बारिश यह फसल के लिए पर्याप्त है जो की सुखा प्रवण क्षेत्र के लिये सबसे अच्छे विकल्प है। जिसके कारण भारत मे सुखे क्षेत्र पर, मुख्यता बारीश आधारित खरीप के मौसम मे इस फसल की बुआई किया जाता है और सिचाई की सुविधा होने पर रबी मौसम मे भी इस फसल की बुआई होती हैं।

नस्ल :

जवार के फसल के लिये विभिन्न नस्ल के बिज उपलब्ध है परंतू संकर बिज न लेते हूये उन्नत या स्थानीय बिज का उपयोग करना जरूरी है जो की क्षेत्र के मौसम को अनुकुलीत होता है एवं जिससे जलवायु बदलाव के कारण मौसम मे आये हूये बदलाव स्थायी रूप से कार्य करती है एवं रोग तथा किट से प्रतिरक्षा करती है। उन्नत बिज के लिये एस.पी.व्ही. - 669*, सी.एस.व्ही. - 15, पी.व्हीं.के. 400, एस.पी.व्ही.-1616 (सि.एस.व्ही-20), सि.एस.व्ही-23, सि.एस.व्ही, - 27, सि.एस.व्ही - 28, पिडी केव्ही कल्याणी जैसे उन्नत नस्ल के बिज उपलब्ध हैं।

फसल पद्धतियाँ/प्रबंधन :

जवार यह फसल मुख्यता मिश्रीत फसल पद्धति द्वारा किया जाता है, मध्य महाराष्ट्र मे जवार फसल सोयाबिन, तुअर,

मुंगफल्ली, कपास, बाजरी, मुंग, उडिद जैसे फसल के साथ बुआई किया जाता है। सिचाई की सुविधा होने वाले क्षेत्र के लिए यह फसल रबी मौसाम मे भी लिया जाता है जिसे पशुओ के लिये हरा घास के लिये बडे मात्रा उत्पादन लिया जाता है, यह फसल स्थानीय एवं पारंपारीक नस्ल के बिज का उपयोग से मौसम को अनुकुलित एवं जवार फसल से पोष्टीक खादय को बनाने सहायता प्राप्त होती हैं। जवार फसल को सिधी दिशा मे मुख्य फसल के साथ अगर मिश्रीत खेती पद्धती द्वारा किया जाये तो मित्र किट को बैठने के लिये एक अच्छी जगह मिलती है जिससे जैविक पद्धति के द्वारा किट नियंत्रण मे सहायता प्रापत होती हैं।

जुताई :

फसल लगाने से पहले जमिन मे रहने वाली पिछले साल की फसल के अवषेश को साफ करे, गर्मी के मौसम मे जमिन को 15 से 20 सेमी. गहराई से अच्छी तरह हल से जोतना चाहिए उसके बाद बखर से 3 से 4 बार मिटटी के स्तर को समान करे जिससे मिटटी मे जल धारण क्षमता को बढावा मिलेगा और बारीश की अनियमितता मे मिटटी मे नमी रहेगी।

बिज का चयन एवं बुआई :

जवार फसल बुआई करने हेतू उच्च प्रतिके बिज तथा क्षेत्र के मौसम को अनुकुलीत हो ऐसे बिज का उपयोग करे, बिज बुआई करने से पहले बिज को जैविक बिज प्रक्रिया करना जरूरी है, जिसमे गाय का गोबर, गोमुत्र एवं हल्दी को पानी मे समप्रमाण में भिगोकर उसे बुआई वाले बिज को लगाये और दो दिन उसे छाव मे सुखाकर बुआई करे। जिसके की बिज की अंकुरण क्षमता बढती है एवं मिटटी के हानीकारण घटक और बुरशी से बिज मे प्रतिरक्षा कवच की क्षमता निर्माण होती हैं।

बुआई का समय :

खरीफ ऋतु मे बारिश शुरू होने के बाद आम तोर पर 25 जून से 10 जुलाई तक बुआई करे अगर बुआई मे देरी हुई तो फसल पर मुरमख्खी का प्रभाव आता है जिससे सही मात्रा बिज अंकुरित न होकर पौधो की संख्या मे गिरावट होती है और किसान को नुकसान पहूचता है। रबी मौसम मे 25 सप्टेंबर से 15 ऑक्टोबर के अंतराल मे बुआई करे।

बिज का प्रमाण एवं बिज बुआई की पद्धतियाँ :

जवार फसल की बुआई मिश्रीत फसल पद्धति द्वारा सिधी दिशा मे करे, बिज सिर्फ 3 से 4 सेमी गहराई मे तिफन द्वारा छोडे दो पौधो के बिच की दूरी 10 से 12 सेमी. रखे एवं प्रति हेक्टर पूरे पौधो की संख्या 1.80 लाख रखे जिससे अपेक्षीत उत्पादन मे बढोत्तरी होकर किसान का लाभ मिलता है, अगर बुआई के समय ज्यादा बिज का उपयोग हो गया है या बिज का अंकुरण क्षमता ज्यादा है तो उपर दि गई संख्या से ज्यादा अगर पौधो है तो उसे निकाल दे। खरीफ मौसम के लिये 7.5 से 10 किलो बिज प्रति हेक्टर कि मात्रा मे उपयोग करें।

जवार फसल के अच्छे उत्पादन के लिये खेत मे जैविक खाद के द्वारा मिटटी को पोषकतत्व देना जरूरी है जिसमे गर्मी के मौसम हल से जुताई होने को बाद 10 से 15 बैलगाडी गोबर खाद या

एकिकृत पोषण प्रबंधन
(Intergrated Nutrinet Management)

कंपोष्ट खाद को खेत मे डाले एवं बख्खर के द्वारा उसे मिटटी मे मिला दे। फसल के लिये रासायनिक खाद का उपयोग न करे उसके विकल्प के जैविक खाद के द्वारा (80 किलो नत्र, 40 किलो स्फुरद एवं 40 किलो पालाश) देना चाहिए ऐसे स्थिति मे जैविक विधी द्वारा निर्मीत जिवामृत, जैविक एन.पी.के., केचूआ जल के द्वार ड्उपर दि हुई खाद की जरूरतो को पूरा करने के लिये हर 5 से 6 दिन के अंतराल मे इस जैविक खाद का उपयोग करे जिससे स्वस्थ सुरक्षीत खादय अनाज की पैदावार होकर मनुष्य एवं पर्यावरण का रक्षण होगा।

सिंचाई का प्रबंधन :

खरीफ सीजन के फसल को सिंचाई देने की आवश्यकता नहीं है, परंतू बारीश कम होने के स्थिती मे अगर सिचाई की सुविधा है तो एक या दो संरक्षीत सिंचाई करे, फसल में फल धारणा होती है उस समय अगर बारीश नहीं है तो एक या दो संरक्षीत सिचाई करें।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन :

अधिक उत्पादन के लिये सुक्ष्म पोषक तत्वो की गिरावट न हो और फसल संरक्षण हेतु फसल के जमीन को घास से नियंत्रित रखे, जवार फसल विकास के 30 से 40 दिन तक खेत मे घास को ना निकलने दे, घास को नियंत्रीत करने हेतू 10 से 15 दिन के अंतराल मे खरपतवार जरूरी है, खरपतवार नियंत्रण निंदाई या डवरा के माध्यम से करना चाहिए। 40 दिन के बाद खेत मे निंदाई नहीं करे।

खोडमख्खी :

यह मक्खी का असर बुआई के एक हफ्ते के बाद होता है, जिस पौधो पर इसका प्रभाव होता है वह सुक जाता है, इसके प्रबंधन हेतु 25 जुन से 7 जुलाई के अंतराल मे नियंत्रण करे जिसमे जैविक प्रक्रिया द्वारा निर्मीत लमित का नियमित उपयोग करे, इस

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Nutrient Management)

के साथ दशपत्ती घोल का फुहारा फसल पर हर 6 दिन के अंतराल मे करे, खेत कि सिमाओ पर जाल फसल का रोपण करे जिससे मित्र किट संख्याओं मे बढोत्तरी होकर जैविक प्रक्रिया द्वारा किट नियंत्रण होता हैं।

खोडकिट :

यह इल्ली कुछ सफेद रंग जैसी होती है जो पौधो के अंदर जाकर उसे खाती है जिससे पौधो का उपर का हिस्सा सुक जाता है। इसे नियंत्रण हेतू उपर दिये गये उपाय करे।

मावा :

मावा के नियंत्रण हेतु 1 लिटर दशपत्ती घोल को 15 लीटर पानी के साथ मिलाकर हर 5 से 6 दिन के अंतराल मे स्प्रे करे साथ मे लमिल और गाय के दुधा तथा सुंठ के द्वारा बनाया हुआ घोल का फुहारा नियमीत रूप से फसल पर करे जिसक्से मावा का नियंत्रण होता है।

मिजमक्खी :

यह मक्खी भुटटो के बिजांडे मे अंडे देती है, जिसमे से एक दो दिन मे इल्ली बाहर निकलती है और बिजांडकोषपर जीवीका करती है और भुटटो मे आने वाले दाने खा लेती है और इस प्रकार से भुटटो में पूर्ण रूप से दाने भर नहीं पाते, इस अवस्था में फसल पर गोमुत्र, लसून, तंबाखु, एवं हरी मिर्ची के उपयोग से बना हुआ लमित का फुआरा नियमीत रूप से हर 5 से 7 दिन के अंतराल में करने से मिजमख्खी पर नियंत्रण होता हैं।

रोग एवं प्रबंधन :

दानो पे आनेवली बुरशी :

जवार के दाने परिपक्वता के समय अगर बारिश आती है, तो भुटटो मे आये हुये दाने पर विभिन्न बुरशी का प्रकोप होता हैं, जिससे फसल के दाने काले होकर नारंगी होते है और दाने की अंकुरण क्षमता काम होती हैं। दाने हलके हो जाते है ऐसे दाने खाने के लिये अयोग्य रहते है और अनाज को बाजार में अच्छी दर नहीं मिलती, इस बिमारी का प्रकोप हवा के कारण ज्यादा होता है, इस बिमारी को नियंत्रित करने हेतु बुआई के समय जैविक पद्धति द्वारा तैयार किया बिजामृत का घोल बिज को लगाये और दो दिन सुख के बाद बुआई करे, इसके रोकथाम हेतू अच्छे नस्ल के बिज का उपयोग करे, फसल की कटाई पूर्ण परिपक्वता के अवस्था मे करे।

खडखडया :

प्रकोप ग्रस्त पौधे पोकले होते है और बुरशीके कोयले जैसे काले बारीक अंशके धागे जैसे पदार्थ से भर जाते है, पौधो को अगर हिलाया तो खडखड ऐसी आवाज आता है, हवा या धक्के से पौधा झुक जाता है, जिससे फसल के भुटटो मे दाने भरते नहीं और उत्पादन मे कमी आती है, इसका प्रसार बिज तथा मिटटी के कारण होता है, इस से फसल की नियंत्रण करने हेतू हर साल फसल की पलटवार करना जरूरी है, मिटटी मे पालाश की मात्रा अगर कम है तो योग्य जैविक पत्रती के द्वारा पालाश की मात्रा का स्तर उपयुक्त रखे, जैविक प्रक्रिया द्वारा बिजप्रक्रिया कर बिज की बुआई करे एवं मिटटी के पोषकतत्वो के लिये 5 से 7 दिन के अंतराल मे नियमीत जैविक खाद का उपयोग करे।

फसल कटाई :

खरिप ज्वारी परिपक्व होने के बाद जल्दी से कटाई करे, जिस से देर से आने वाली बारीश के कारण फसल खराब नहीं होगी, अनाज को संग्रहित करते समय अनाज मे नमी का प्रमाण 10 से 12% के उपर नहीं होना चाहिए।

उत्पादन :

उन्नत बुआई पद्धति का उपयोग करने से सामान्यता प्रति हेक्टर से 30 से 40 क्विंटल अनाज का उत्पादन होता है एवं 120 से 145 क्विंटल पशुओ के लिये चारा की उपलब्धी होती है।

धान

धान यह फसल सामान्यता खरीफ मौसम मे लिया जाती है और पानी की पर्याप्त व्यवस्था होने पर गर्मी के मौसम मे भी इस फसल को लिया जा सकता है। धान ग्रामिन घास के प्रजाती वाले परिवार से आता है। धान यह फसल एशियाई देश एवं भारत मे सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण खादय अनाज है, धान के पौधे 2 से 6 फुट उंचे बढते है जो की एक गोल आकार मे शाखा की बाली के उपर के हिस्से मे धान का अनाज भरा हुआ होता है। फसल 115 से 135 दिन के अंतराल मे कटाई के लिये परिपक्व होती है।

आंतरिक घटक :

धान यह उर्जो के लिये एक महत्वपूर्ण घटक है एवं कोलेस्ट्रॉलमुक्त है, धान यह रक्तचाप को नियंत्रित करने मे महत्वपूर्ण रूप से कार्य करता है जो की नायसिन, व्हिटामिन डि, कॅल्शीयम, फायबर, लोह, थायसिन व रिबोफ्लेविन का सबसे अच्छा स्त्रोत है।

उदय एवं इतिहास :

भारत के प्रमुख राज्यो मे धान यह मुख्य फसल है, चिन के बाद उत्पादन एवं व्यापार मे भारत दुसरे नंबर पर अग्रेसर है। बढती हुई धान की खेती विभिन्न क्षेत्र मे अलग अलग प्रकार की होती है, परंतु भारत एवं ऐशियाई देशो मे लगभग धान की बुआई एवं संग्रहित करने की पद्धतियॉ परंपरागत विधीयो जैसे ही प्रचिलीत है। आज दुनिया मे बहोत सारे देश धान की आधुनिक पद्धति का उपयोग कर खेती करते है जिससे की श्रम मे कमी आकर उत्पादन खर्चे मे गिरावट दर्ज हुई है। आज भारत के दक्षिण विभाग मे धान का उत्पादन सबसे ज्यादा होता हैं।

क्षेत्र एवं विस्तार :

आज भारत के दक्षिण विभाग मे धान का उत्पादन सबसे

ज्यादा पैदावार होता हैं, परंतु पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, आंध्रप्रदेश, तेलंगाणा, पंजाब, बिहार, ओरीसा, छत्तिसगड, आसाम, हरियाणा यह राज्य तथा महाराष्ट्र के कोकाण एवं पूर्व महाराष्ट्र तथा पहाडी क्षेत्र पर इस फसल की पैदावार बड़ी मात्रा होती है।

जैविक गुणतत्व :

धान घास प्रजाती की फसल है जो 2 से 6 फुट तक गोल आकार मे होती है और शाखाये लंबी होती है और शाखाओ पर उपर बाली आती है जिसमे अनाज बनता है।

मौसम :

धान यह फसल समंदरस्तर से उचाई एवं अनुकुल मौसम के अनुसार लिया जा सकता है, समंदरस्तर से 3000 मीटर तक यह फसल का बुआई कर सकते है, इस फसल के लिये उच्च तापमान एवं नमी वाला मौसम फसल के लिये अच्छा साबित होता है, यह फसल 30 अंश सेल्सीअस से 40 अंश सेल्सीअस तक तापमान की स्थिती मे आती है।

इस फसल के लिये सिल्टी मिटटी, लोमस, ग्रेवल्स और चिकन मिटटी जैसी जमिन फसल के लिये महत्वपूर्ण होती हैं।

नस्ल :

धान फसल की विभिन्न नस्ल उपलब्ध है जिसमे की मौसम के अनुसार विभिन्न क्षेत्र मे अलग अलग नस्ल का उपयोग किया जाता है । कृषि विश्वविद्यालय की सिफारिशो के द्वारा जल्दी आनेवाली एवं देर से आनेवाली फसल के बिज का अनुसंधान किया गया हैं।

जल्दी आनेवाली धान की नस्ल :

साकोली-6, सिन्देवाही - 1

मध्य मे आनेवाली :

पिकेव्ही किसान, सिन्देवाही - 75, पीकेव्ही गणेश, सिन्देवाही - 4, पीकेव्ही एचएमटी, साकोली - 9, पूर्व प्रसारित, सिंदेवाही 2001

देरी से आनेवाली बिज का नस्ल :

सिन्देवाही - 5, साकोली - 8

सुगंधीत नस्ल :

साकोली - 7, पीकेव्ही मकरंद, पीकेव्ही खमंग

ऐसे विभिन्न प्रकार के धान के नस्ल उपलब्ध है, किसान ने अपने खेती के लिये स्थानीय मौसम के आधार पर जो नस्ल का बिज अनुकुलित होता है और जालवायु बदलाव मे उपयुक्त है ऐसे बिज का उपयोग करे इससे फसल पर रोग तथा किट के प्रभाव नहीं होगा और उत्पादन मे बढोत्तरी होगी।

नर्सरी की तैयारी एवं बिजरोपण :

धान फसल के लिये जमीन को हल के द्वारा जुताई कर मिटटी को एकसमान कर ले, 100 सेमी. चौडे, 10 सेमी उचे एवं उपयुक्त लंबाई के गददी वाफाये तैयार करे, इस कॅरी ओ मे प्रति आर क्षेत्र के लिये 300 किलो अच्छा तैयार गोबर खाद का प्रयोग करे, बुआई के लिये छोटी नस्ल के 35 से 40 किलो बिज एवं मध्यम या बडे लंबे धान अनाज के बिज के नस्ल 50 किलो प्रति हेक्टर की मात्रा मे ले, इस बिज को 10 लीटर पानी मे डाले और उसमे 300 ग्राम नमक डाले, इस प्रमाण मे घोल तैयार होने के बाद उसमे बिज को छोड दे, जो भी बिज पानी के उपर आयेगा उसे निकाल दे और निचे पानी मे बैठे भारी बिज अंकुरण के लिये स्वस्थ होता है। उस बिज को 2 से 3 बार पानी से धोकर 24 घंटो तक छाव मे सुखा ले। बिज की बुआई के पहले बिज को जैविक प्रक्रिया से जैसे गाय का गोबर, गोमुत्र एवं हल्दी पानी के साथ मिलाकर उसे बिज को लगाये और छाव मे सुखने दे, सुखने के बाद बुआई कर। जिससे बिज का अंकुरण क्षमता बढती है एवं रोग प्रतिरक्षा को बढाने मे सहायता मिलती है। नर्सरी मे बिज की बुआई के बाद 21 से 25 दिन के अंतराल मे पौधे बुआई के लिये तैयार होते हैं।

फसल बुआई :

पहले से तैयार खेत मे लकडी के हल के द्वारा या पॉवर टिर के द्वारा मिटटी एवं पानी को मिलाकर एक संघ मिला दे उसे चिखलनी कहने है। चिलखनी के बाद खेत को समान स्तर करने के लिये एक लकडी से मिटटी को घुमाये और मिटटी का स्तर एकसमान करे। चिखलनी करते समय जैविक घटक के उपलब्धता के द्वारा 50 किलो स्फुरद एवं 50 किलो पालाश प्रति हेक्टर की दर से दे एवं नत्रयुक्त खात की आधी मात्रा यानी 50 किलो प्रति हेक्टर कि मात्रा मे खेत मे डाल दे। खेत को मेड के द्वारा बांध दिया जाये ताकी बारिश का पानी उस मे रूका रहे।

पौधारोपण के लिये पौधो का प्रमाण :

नर्सरी मे पौधे 21 से 25 दिन के होने के बाद धान का पौधारोपण करे, जिसके लिये दो दिन पहले कैरिओ के पानी का स्तर को बढा दे जिससे रोप निकालना आसान हो जायेगा। पौधो को लगाने के लिये 20x15 सेमी. के अंतराल मे 2 से 3 पौधो को 2 से 4 सेमी. गहराई मे लगाया जाये।

धान फसल की उन्नत बुआई की पद्धतियाँ :

श्री पद्धति

श्री पद्धति यह धान फसल के बुआई की एक उन्नत विधी है, जिसमे बिज एवं पानी की लागत कम किया जाता है एवं फसल पर किट रोग का प्रभाव कम होता है।

श्री विधी द्वारा धान बुआई के मुख्य घटक :

धान फसल के बांध या कॅरीमे ज्यादा से ज्यादा जैविक खाद एवं फसल के जैविक अवषेश का उपयोग करे, 8 से 10 दिन के पौधो का पूर्नरोपण करे, यह सुनिश्चित करे की धान के पौधो की जड़ो को नुकसान ना हो। उसके छोटी छोटी जडो को मिटटी के साथ जमीन मे उपर ही सिधी दिशा मे रोपण करे जिससे यह पौधो

की जडे मिटटी मे जल्दी जम जाती है और फसल को बढने मे, शाखाये एवं बाली के विकास मे सहायता प्राप्त होती है।

जल्दी आनेवाली नस्ल के बिज का उपयोग कर 20 सेमी. के दुरी पर बुआई करे एवं मध्यम तथा अधिक समय वाली नस्ल के बिज के लिये 25 सेमी की दुरी पर प्रति चुड मे एक पौधे का रोपण करे। बुनियादी स्थिती मे श्री विधी के फसल मे घास ज्यादा होता है जो निंदाई या हाथ से निकालकर नियंत्रीत रखे एवं पानी का स्तर स्थायी रूप मे रखे अगर पानी का स्तर कम होता है तो सिंचाई के द्वारा पूरा करे।

लाभ :

इस विधी द्वारा बिज एवं सिचाई पानी का उपयोग कम होता है जिसमे प्रति हेक्टर 5 किलो बिज पर्याप्त है, पारंपारिक विधी की तुलना मे पानी की बचत आधी होती हैं। फसल को अधिक मात्रा मे शाखाये, बालीयॉ एवं बालीओ मे अनाज की मात्रा ज्यादा होती है। अन्य विधी के तुलना मे फसल जल्दी परिपक्व होती है एवं किट रोग का प्रभाव कम होता है। पारंपारिक धान बुआई विधी के तुलना मे स्थायी रूप से 20 से 30 टक्के उत्पादन ज्यादा मिलती है।

चार सुत्री धान बुआई विधी :

धान भुसा एवं घास का उपयोग :

नर्सरी मे प्रति चौरस मीटर के दर के क्षेत्र मे 1.0 किलो धान का भुसा या तुस राख का नर्सरी मे बुआई के पहले डाल दे, पौधो का रोपण करते वक्त धान के घास का गठठा प्रति हेक्टर दो टन जमीन मे गाड दे।

हरे खाद का कुछ प्रमाण मे उपयोग :

गिरीपुष्प या गराडी के1.5 टन पत्ते प्रति हेक्टर के मात्रा मे जमीन मे गाड दे।

पौधो की नियंत्रीत बुआई :

धान के पौधो का रोपण 15 सेमी. दुरी पर जहॉ नॉयलौन के रस्सी से अंकन किया गया है ऐसे जगह पर रोपण किया जाये जिससे धान के पौधो का 15 सेंमी के दुरी मे चौरस तैयार होकर आडे और खडे पंक्तिओ की दुरी 25 सेमी रहती है जिससे अपेक्षीत उत्पादन मे बढोत्तरी होने सहायता होती हैं।

फसल के अच्छे उत्पादन हेतु गर्मी के मौसम मे मिटटी की चॉच करने से किसान को जानकारी होती है, कि मिटटी मे कौन से पोषकतत्वो की कमी है और कौनसा खाद की मात्रा कितनी देनी है। आम तौर पर धान की खेती की 100 किलो नत्र 50 किलो स्फुरद, एवं 50 किलो पालाश प्रति हेक्टर की दर से दे। सभी उपर

एकिकृत पोषण प्रबंधन
(Intergrated Nutrient Management)

दिये गये खाद से नत्र का, बचा हुआ आधा डोज एवं पालाश, स्फुरद का आधा डोज दो मात्रा मे फसल शाखाऐ विकसीत होते समय या बाली आने वाले समय दे। बुआई किये हुये या बारिशपर निर्भर रहने वाले फसल को 60 किलो नत्र. 30 किलो स्फुरद एवं 30 किलो पालाश प्रति हेक्टर की दर से दे। यह नत्र, स्फुरद एवं पालाश के परिपूर्ती के लिए जैविक खाद का उपयोग करे, जिसमे जीवामृत, एनपीके जैविक, फिश अॅमिनो अॅसिड, केचुआ जल एवं स्थानीय सुक्ष्म जिवाणु जैसे जैविक खाद को किसान द्वारा घर मे ही बनाकर नियमीत रूप से 5 से 6 दिन के अंतराल मे फसल के कॅरिओ मे छोडे। साथ ही अ झोला वनस्पती को फसल के कॅरिओ मे छोडकर फसल को प्राकृतिक तरिके से खाद मिलता हैं।

सिंचाई का प्रबंधन :

धान की फसल का पूर्नरोपण होने के बाद पौधो की जडे मिटटी मे जमने तक कॅरिओ मे जल का स्तर 2.5 सेमी तक रखना चाहिए, इसके बाद दाने परिपक्वता मे आते वक्त जल का स्तर 5 सेमी. तक रखे। कुछ समय के अंतराल के बाद बांध के पानी को छोड दे। फसल को जडे सही तरह से मिटटी मे जुडने के बाद जल का स्तर 10 सेमी. तक रखे, उसके बाद धिरे धिरे जल का स्तर कम करे और फसल काटले से 10 दिन पहले कॅरिओ का जल पूरी तरह से निकाल दे। जब फसल को फुल आने का समय है उस वक्त कम पानी का तनाव नहीं होना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन:

धान फसल के बुआई के 15 दिन के बाद निंदाई करे और फसल को घास से नियंत्रीत रखे, पहिली निंदाई होने के बाद 2 से 3 हफ्ते के अंतराल मे निंदाई करते रहे, ताकी फसल के बिच कोई भी घास ना निकले जिससे फसल के विकास मे बाधाये ना आये। अगर धान का फसल घास से मुक्त या नियंत्रीत रहने से फसल के विकास मे सहायता मिलती है एवं अपेक्षीत उत्पादन मिलता हैं।

धान फसल पर खोडमक्खी, गादमक्खी, तुकतुडे, लष्करी इल्ली, पत्ते को जमा करने वाली इल्ली एवं पिठया ठेकूगा जैसे किट का प्रकोप होता हैं।

खोडकिट :

खोडकिट के रोकथाम हेतु अच्छे नस्ल के बिज का उपयोग करे जिसमे साकोली 8, सिंदेवाही 5 यह नस्ल का उपयोग करे। पौधो को लगाने के पहले बिज क्लोरीपायरोपॉस के 10 प्रतिशत

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Pest Management)

प्रवाही 10 मिली प्रति 10 लीटर पानी मे डालकर 12 घण्टे डुबाकर रखे और रोपण करे। धान फसल की कटाई जड से करे, धान की कटाई हाने के बाद जमिन मे हल करे और फसल के अवषेश को नष्ट करे। फसल पर किट का प्रकोप दिखने के बाद लमित एवं दशपत्ती घोल का नियीमत रूपमे फुहारा करे।

गादमक्खी :

यह किट को नियंत्रित करने हेतु सिंदेवाही 2001, साकोली 8 एवं पीकेवही गणेश जैसे बिज के नस्ल का उपयोग करे, साथ मे इसे पोषक रहने वाले फसल को नष्ट करे, किट का प्रभाव हुये पौधो को निकाल ले साथ मे जैविक विधी द्वारा तैयार लमित, निम अर्क एवं दशपत्ती घोल का नियमीत रूप से उपयोग कर इस मक्खी को नियंत्रित कर सकते हैं।

तुडतुडे :

हलके लाल रंग की यह किट होती है, इसके नियंत्रण हेतु सिंदेवाही 1, सिंदेवाही 5 इस नस्ल के बिज से नर्सरी तैयार करे। पौधो को अधिक पास मे ना लगाये, नत्र खाद की अधिक मात्रा का उपयोग ना करे, इस किट को नियंत्रीत करने हेतू लमित, दशपत्ती का उपयोग नियमीत रूप से करे।

लष्करी अल्ली :

लष्करी अल्ली का पभाव नर्सरी एवं पौधो का रोपण होने के बाद या फसल परिपक्व होते समय होता है और फसल को नुकसान करते है। कम प्रभाव के समय अल्ली दिन मे पौधो के जडो मे, मिटटी के निचे, पत्थर के निचे दबी रहती है और रात के समय फसल को नुकसान पहुचाती है । जंगली क्षेत्र, पाट के बांध पर इस किट का प्रजनन होता है और वहॉ से नर्सरी या रोपण किये हुये पौधो पर या फसल परिपक्वता के समय प्रभाव करती है, जिससे फसल की शाखाये, बालीयॉ को काटकर रखती है।

इसके नियंत्रण हेतु नर्सरी मे या रोपण, किये हुये कॅरिओ मे पानी रखे, मेड या खेत की सिमाओ को साफ रखे तथा जैविक किट नियंत्रको का नियमीत रूप से उपयोग करे, साथ मे जाल फसल की खेत की सिमाओ मे बुआई करे जिससे मित्र किटको संख्या, बढकर जैविक दृष्टी से किट नियंत्रण मे सहायता मिलती हैं।

पत्तो को जमा करनेवाली अल्ली :

पत्तो को जमा करनेवाली अल्ली, बेरह अल्ली या शिंगे अल्ली के नियंत्रण हेतु जैविक किटनियंत्रको को उपयोग करें।

पिठया ठेकुण (मिलीबग) :

पिठया ठेकूण यानी मिलीबग के नियंत्रण या प्रभाव से दुर रहने के लिये लमित, निअर्क या दशपत्ती का उपयोग करें।

रोग प्रबंधन

करपा एवं मानमोडी :

इस रोग के नियंत्रण हेतु प्रतिरोधक नस्ल के बिज का उपयोग करे जिसमे आर पी 4-14, रत्ना, साकोली-6, आय आर 64 जैसे बिज का उपलब्ध है। नर्सरी मे या पौधो का रोपण होने के बाद 15 दिन के बाद पत्तोपर इस रोग का प्रभाव दिखाई देता है तब गाय के दुध से एवं सुठ से बना हुआ जैविक घोल का फसल को फुहारा करे।

आभासमय काजली :

इस रोग के नियंत्रण हेतु नमक के पानी मे बिज प्रक्रिया करना चाहिए एवं जैविक पद्धति का उपयोग कर बिज उपचार करे। हलके या रोग वाले बिज को नष्ट करे, खेत रोग के प्रभाव मे दिखाई देने वाले पौधो को निकाल ले।

राईस बंट :

इस रोग का प्रभाव धान की खेती किये जाने वाले क्षेत्र मे ज्यादा दिखाई देता है, प्रमाणीत बिज मे अगर इस के प्रभाव 0.5 प्रतिशत से ज्यादा दिखाई देता है, तो ऐसे बिज को बुआर्ठ के लिए ना ले। इस बिज के कारण धान का रंग काला होता है जो की काला भाग याने टेलीओस्पोअर बिजाणू बिज या जमिन से 4 से 5 साल सुप्तअवस्था मे रहते है। फसल फुल बनते समय दिखने पर जैविक पद्धति द्वारा नियंत्रीत करे।

फसल कटाई :

फसल तैयार होने से 25 से 30 दिन पहले फसल के बाली से 90 प्रतिशत दाने परिपक्व होने के बाद धान फसल की कटाई करे और फसल पुरी तरह से सुखने के बाद अनाज को साफ करें।

उत्पादन :

धान का फसल मे उन्नत खेती प्रथाओ को अनुकरण से 40 से 50 क्विंटल प्रति हेक्टरी होता हैं।

सावा

सावा यह फसल भारत की पारंपारिक एवं स्थानिय फसल है, जिसका उत्पादन बडी मात्रा मे पहाडी क्षेत्र मे लिया जाता हैं। सावा फसल पहाडी क्षेत्र के किसान की जीवका को स्थायी रखने वाली एक महत्वपूर्ण फसल है। यह फसल द्वितीय स्तर की घास प्रजाती की फसल है, जिसे भारत मे अलग अलग क्षेत्र के अनुसार विभिन्न नामो से जाना है। मध्यभारत मे स्थानीय लोग इस फसल को सावा नाम से परिचीत है। सावा यह फसल बुआई के बाद 70 से 80 दिन के अंतराल मे परिपक्वता मे आती हैं। यह फसल वर्षा आधारित खेती के लिये सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होती है, जो की मुख्य रूपमे खरीप मौसम मे इसे लिया जाता हैं।

आंतरिक घटक :

सावा यह फसल मे प्रोटीन्स एवं कार्बोहायर्डेड बडी मात्रा पायी जाती है, सावा का अनाज बाजरी फसल के बिज से छोटा

होता हैं । स्थानीय किसान के अनुसार यह फसल छोटे बालक, गर्भवती माताऐ एवं स्तनदा माताओ के लिये पोशकतत्व से भरा हुआ भांडारा है, आहार मे इसके नियमीत सेवन से उर्जा मिलती है एवं गर्भवती तथा स्तनदा माताओ के लिये पूरा पोशष मिलता है सावा फसल का अनाज के बाद निकलने वाला भुसा पशुओ के लिये पोशक खादय के तौर पर उपयोग किया जाता हैं।

क्षेत्र एवं विस्तार :

यह फसल का उदयस्थान भारत है और भारत से ही अन्य दोनो मे इसका प्रसार एवं प्रसार हुआ है। महाराष्ट्र तथा मध्यप्रदेश के पहाडी क्षेत्र मे मुख्यत अमरावती जिले के अचलपुर, धारणी एवं चिखलदरा के पहाडी क्षेत्र मे इस फसल की पैदावार आदिवासी किसान बडी मात्रा में लेते हैं।

जैविक गुणतत्व :

सावा फसल का पौधा उचा बढता है, फसल के पौधो की भाखाओ पे बाली के आती है जो की पौधा झाडी जैसी प्रकार की एक वनस्पती है। यह फसल के पौधो की उंचाई 60-70 सेमी. होती हैं। और इसके पत्ते 15 से 25 सेमी. तक लंबे एवं मोटे होते है। इस फसल के भाखाओ मे बाली आती है, जो की 12 से 15 सेमी. लंबी होती है एवं संपूर्ण रूप से परिपक्व बाली मे 15 से 20 ग्राम तक अनाज होता है, फसल की बाली आम तौर पर मनुष्य के बडी उंगली इतनी मोटी होती है, सावा का अनाज यह बाली मे भरा रहता है जो की हलका सा लाल रंग का होता हैं।

मौसम :

यह फसल गरम मौसम मे अच्छी तरह से उत्पादन देता है, आज दुनिया के गरम प्रदेशो मे सावा फसल का उत्पादन बडी मात्रा मे लिया जाता है, यह फसल कम या ज्यादा बारिश के स्थिति मे अपना उत्तरजिवीता बरकरार रखती है, इसी लिए यह जलवायु परिर्वतन के बदलाव के लिये अनुकुलीत फसल है जो की सिमात किसान की सालाना जीवीका एवं अन्नसुरक्षा हेतु रूप मे स्थायी विकल्प हैं।

सावा हेतु भुमी का चयन :

सावा यह फसल की निम्मस्तर से उच्च प्रत की जमीन तक कोई भी जमीन मे अच्छी तरह पैदावार होती है परंतु किसान इस फसल को कम पानी की लागत होने के कारण पहाडी जमीन, उतार की जमीन जैसे हलकी जमीन का ही ज्यादा उपयोग करते है क्योकि यह फसल निम्मस्तर की मिटटी या कम बारिश से अनुकुलीत होने के कारण किसान अपने पास की हल्की जमीन का उपयोग करते है। परंतू अच्छी पैदावार हेतु इस फसल के लिये अच्छी जल धारण क्षमता वाली जमीन का चयन करें।

नस्ल :

सावा फसल यह सिधी बुआई करने वाली नस्ल फसल में आता है, जिसके कारण, बिज के लिए बाजार पर आश्रीत ना रहते हुये पिछले साल उत्पादित अनाज से बडे एवं भारी दानो को अगले साल के बिज के लिये संरक्षीत करे, जिससे स्थाानीक क्षेत्र मे अनुकुलीत बिज का निर्माण होकर बाजार की आश्रीयता नहीं नहेगी एवं बिज उत्पादन स्थानीय स्तर पर होगा।

फसल पद्धतियॉ/प्रबंधन :

सावा यह फसल को एक फसल या मिश्र फसल पद्धति द्वारा बुआई किया जा सकता है। जिस प्रदेश मे बारिश का प्रमाण निम्मस्तर का है, ऐसे प्रदेशो मे सावा के साथ जवार, उडीद, मुंग जैसे फसल की बुआई करे परंतू जिस फसल मे अधिक मात्रा मे निंदाई या घास निकालना पडता है ऐसे फसल के साध इस फसल की बुआई ना करे क्योंकि ज्यादा निंदाई या डवरा करने से फसल को नुकसान होता है और पैदावार मे कमी आती हैं।

जुताई :

बुआई करने वाले जमिन से पिछले फसल की जडो तथा जैविक अवशेष को साफ करें, बारीश शुरू होने से पहले खेत को जोत ले और मिटटी को 4 से 6 सेमी तक लचीला बना ले एवं मिटटी को एकसमान स्तर पे मिला दे। इस फसल के लिये हल के द्वारा ज्यादा गहरा जुताई नहीं करे।

बिज का चयन एवं बुआई :

सावा फसल की बुआई करने हेतु उच्च प्रति के बिज तथा क्षेत्र के मौसम अनुकुलीत हो ऐसे बिज का उपयोग करे, बिज बुआई करने से पहले बिज को जैविक बिज प्रक्रिया करना जरूरी है, जैसे की जैविक बिज प्रक्रिया करने के लिये गाय का गोबर, गोमुत्र एवं हल्दी को पानी मे समप्रमाण भिगोकर उसे बुआई वाले बिज को लगाये और दो दिन उसे छाव मे सुखाकर बुआई करे। जिससे की बिज की अंकुरण क्षमता बढती है एवं मिटटी के हानीकारण घटक और बारीश से बिज का संरक्षण होता हैं।

बुआई का समय :

यह फसल कम पानी मे अच्छी पैदावार देती है, इसके लिये खरीप मौसम मे अच्छी बारिश शुरू होने के बाद आम तोर पर जुलाई माह के 25 से 20 ऑगस तक बुआई करे, बारीश के शुरूवाती दिनो मे बुआई ना करे, क्योंकि बारीश ज्यादा होने के कारण एवं मिटटी हमे गर्मी होने के कारण बुआई जुलाई के अंतीम सप्ताह मे शुरू करें।

बिज का प्रमाण एवं बिज बुआई की पद्धतियॉ :

सावा फसल की बुआई हाथ से फैलाकर या बुआई उपकरण के द्वारा सिधी दिशा मे करे, सिर्फ 2 से 3 सेमी. गहराई मे जमीन के अंदर जाना चाहिए। फसल दो पंक्तियों की दुरी 25 सेमी. एवं पौधो की दुरी 10 सेमी. रखे। सिधी दिशा मे बुआई करने से फसल को अंकुरण अच्छा होता है, जिससे की खरपतवार एवं आंतर फसल प्रबंधन अच्छी तरीके से होता हैं। एकल फसल पद्धति मे बुआई के लिये 12 से 15 किलो बिज प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त होता है।

सावा फसल को अन्य फसल की तुलना से रासायनीक खाद की मात्रा कम लगती है, परंतु मिटटी मे अगर पोशकतत्वो की कमी

एकिकृत पोषण प्रबंधन
(Intergrated Nutrient Management)

होनेपर पैदावार मे नुकसान होता है, ऐसे समय जैविक विधी द्वारा निर्मीत खाद का उपयोग करें। सावा फसल को नत्र की मात्रा देने की परिपूर्ति के लिये जैविक युरिया का उपयोग करे, जिस मे 20 लीटर क्षमता वाला प्लास्टिक के ड्रम ले उसमे 10 किलो पानी से साफ कि गई बारीक रेती ले, उसमे 2.5 से 5 लीटर तक गोमुत्र डाले और इसे ढक्कन से बंद कर छाव मे रखे और नियमीत रूप से लीटर इसमे हर दिन 2.5 से 5 लीटर गोमुत्र डाले, 20 से 25 दिन के बाद जब रेती पूरी तरह से उसका रंग काला होने के बाद 3 से 4 दिन तक उसे दाव मे सुखाये। इस विधी द्वारा जैविक युरीया तैयार हो जाऐगा। इसे फसल के जडो के पास डाले, यह जैविक विधी द्वारा तैयार युरीया फसल को प्रकृतिक तरी के नत्र देने का काम करता है। इसी के साथ जैविक विधी द्वारा निर्मीत जीवामृत एवं एनपीके जैविक जैसे खाद का नियमीत उपयोग करे।

जैविक खाद की उपलब्धता के अनुसार बुआई के पहले 5 से 10 टन प्रति हेक्टर अच्छे परिपक्व गोबर खाद या कापोष्ट का उपयोग करने से किसान को सुनिश्चित प्रकार से उत्पादन मे बढोत्तरी होती हैं।

सिंचाई का प्रबंधन :

खरीप सीजन के फसल को सिंचाई देने की आवश्यकता नहीं है, परंतू बारीश कम होने के स्थिती मे जिस समय फसल मे फल के भाखाओ का विस्तार होता है और बाली आना शुरू होता है, उस समय सिंचाई की सुविधा है तो सिंचाई करे इससे निश्चत रूप से उत्पादन मे बढोत्तरी होकर उत्पादन मे लाभ होता हैं।

खरपतवार नियंत्रण/प्रबंधन :

अधिक उत्पादन के लिये एवं मिटटी मे सुक्ष्म पोशक तत्वो की गिरावट न हो और फसल संरक्षण हेतु फसल के जमीन को घास से नियंत्रीत रखे, सावा फसल विकास के 35 दिन तक खेत मे घास को ना निकलने दे, घास को नियंत्रीत करने हेतू 15 से 29 दिन के अंतराल मे खरपतवार जरूरी है, खरपतवार नियंत्रण निंदाई या डवरा के माध्यम से करना चाहिए।

पिला रोग :

सावा फसल पे मुख्यता पिला रोग आता है, जिससे फसल के पत्ते पिले रंग के होते है, जो की नत्र की कमी के कारण आता

एकिकृत किट एवं रोग प्रबंधन
(Intergrated Pest Management)

है, सही समय पर इलाज न होने पर फसल के पैदावार मे कमी आती है। इस रोग के नियंत्रण एवं प्रबंधन हेतु फसल का पोशण सही मात्रा मे होना जरूरी हैं।

फसल कटाई :

सावा फसल बुआई से 70 से 75 दिन के अंतराल मे कटाई के लिये तैयार होती है, जब फसल पूर्ण रूप से परिपक्व हो जाता है, तब फसल की कटाई शुरू करनी चाहिए, आम तौर पर ऑक्टोबर महिने के दुसरे सप्ताह तक फसल परिपक्व हो जाती है। परिपक्व होने के बाद दराती से पौधो को निचे से काटकर उसके गठठे बनाले और बैलोके पैरो से तुडवाकर या थ्रेशर मशिन से द्वारा सावा अनाज को बाली से अलग करे।

उत्पादन :

उन्नत बुआई पद्धति का उपयोग करने से सामान्यता प्रति हेक्टर 8 से 10 क्विंटल सावा अनाज एवं 6 से 7 क्विंटल भुसा निकलता है जो पशुओ के लिये चारा के तौर पर उपलब्ध होता हैं।

“सबल”

सबल परियोजना

कार्यान्वयन सहयोगी संस्थाए

KDSS
In Pursuit of Development

खण्डवा डायोसिसन
समाज सेवा , खण्डवा

SPANDAN

स्पंदन समाज सेवा समिति
खण्डवा

JEEVAN VIKAS SANSTHA
JVS
PARTNERING WITH THE POOR

जीवन विकास संस्था
अमरावती

Caritas INDIA
The Joy of Service...

जनहित मे प्रकाशित

कारितास इंडिया

जीवन ज्योति प्राथनालय, 38 बेड़ेकर कॉलोनी, अनंद नगर, खण्डवा (म.प्र.) 450001